उम्मुल अमराज़

शैख़ुल हदीस मौलाना मुहम्मद ज़करिया (रह०)

मुहम्मद इक़बाल

उम्मुल अमराज़

शैखुल हदीस मौलाना मुहम्मद ज़करिया (रह०)

मुहम्मद इक़बाल

www.idaraimpex.com

उम्मुल अमराज़

शैखुल हदीस मौलाना मुहम्मद ज़करिया (रह०)

मुहम्मद इक़बाल

Ummul Amraz (Hindi)

प्रकाशन : 2013

ISBN : 81-7101-514-X

TP-222-13

Published by Mohammad Yunus for
IDARA IMPEX
D-80, Abul Fazal Enclave-I, Jamia Nagar
New Delhi-110 025 (India)
Tel.: 2695 6832 Fax: +91-11-6617 3545
Email: **sales@idaraimpex.com**
Visit us at: **www.idarastore.com**

Designed & Printed in India

Typesetted at: **DTP Division**
IDARA ISHA'AT-E-DINIYAT
P.O. Box 9795, Jamia Nagar, New Delhi-110025 (India)

विषय-सूची

विषय | पृष्ठ

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

ज़रूरी तम्हीद और लिखने का मक़्सद

हामिदंव-व मुसल्लियं-व मुसल्लिमा० अम्मा बाद

कुत्बे रब्बानी अल्लामा अब्दुल वस्हाब शेरानी क़द्द-स सिर्रहू फ़रमाते हैं कि—

'जानना चाहिए कि बन्दे का अपनी हद से आगे बढ़ जाने की वजह यह है कि वह अल्लाह तआला की सूरत पर पैदा किया गया और चूंकि अल्लाह तआला तमाम सिफ़ाते जलालीया—तकब्बुर, बुज़ुर्गी, इज़्ज़त व अज़्मत, शौकत व जलालत—से मौसूफ़ है, तो उसकी सूरत (इंसान) में भी ये बातें (साए की शक्ल) में पाई जाती हैं।' (अन्वारे कुदसिया)

इसलिए हर इंसान शऊरी या ग़ैर-शऊरी तौर पर अपनी बड़ाई पसन्द करता है और जिहालत की वजह से उसको अपने लिए साबित करता है, हालांकि ये सिफ़तें ख़ास्सा-ए-ख़ुदावन्दी हैं और बन्दे की सिफ़तें इज्ज़ व इंकिसार, तवाज़ोअ व इफ़्तिक़ार व एहतियाज है, जिसको वह भूला हुआ है, इसलिए हर इंसान को अपना इलाज और तज़्किया कराने से पहले अपने को इस मरज़ 'तकब्बुर' का मरीज़ समझना चाहिए, ख़ास तौर से जो लोग इस्लाम के ज़ाहिरी हुक्मों की पूरी पाबन्दी के साथ अल्लाह की रिज़ा और क़ुर्ब के लिए ईमान और यक़ीन और मारफ़त और एहसान के ऊंचे दर्जे हासिल करने की कोशिश में हैं और चाहते हैं कि उनके अमलों में रूह पैदा हो और

वे वज़नदार बन जाएं और अल्लाह तआला को अपनी मारफ़त बख़्शें, वे दोस्त इस बात का यक़ीन कर लें कि अल्लाह तआला की बारगाह निहायत पाक और हर ऐब से हद दर्जा मुनज़्ज़ह (पाक) है, इसलिए उससे मिलने का रास्ता भी पाकी और पाकीज़गी चाहता है। मासियतों (अल्लाह की नाफ़रमानियों) की गन्दगियों से भरा हुआ शख़्स इस बारगाह के लायक़ नहीं।

इस राह का तरीक़ा अख़्लाक़ का संवारना, हमेशा ख़ुदा की तरफ़ लौ लगाए रखना और अल्लाह तआला की रिज़ा में बिल्कुल ही मस्रूफ़ हो जाना है, यानी उसका तरीक़ा तह्ज़ीबे अख़्लाक़ है कि बुख़्ल, हसद, रिया और किब्र, ख़ुदनुमाई वग़ैरह तमाम अख़्लाक़े ज़मीमा (बुरे अख़्लाक़) से दूर होकर सख़ावत, इख़्लास, तवाज़ो, तज़ल्लुल, आजिज़ी, जुम्ला पसंदीदा अख़्लाक़ हासिल हो जाए, ताकि वसूल इलल्लाह की इस्तेदाद पैदा हो, इसके बग़ैर इबादत की ज़्यादती भी ज़्यादा फ़ायदेमंद नहीं होती, क्योंकि रज़ील बातों की वजह से आमाल ज़ाया और नाक़िस हो जाते हैं और चूंकि यह रास्ता (सुलूक व एहसान) हक़ीक़ी सआदत और बड़ी कामियाबी का रास्ता है, इसलिए शैतान भी इस रास्ते पर चलने वालों की कोशिशों को बेकार करने में पूरी मेहनत से काम लेता है और उसकी तदबीर इस तरह करता है कि बातिनी अख़्लाक़ की दुरुस्ती, जो उनका असल मौज़ू है, उसके ख़िलाफ़ रज़ाइल और बुरी आदतों में मुब्तला कर देता है और उसके लिए निज़ाम यह बनाता है कि ज़ाहिरी गुनाहों से तक़्वा और परहेज़गार और इबादत की कसरत में कोई रुकावट पैदा नहीं करता, लेकिन अन्दर ही अन्दर उम्मुल अमराज़ यानी किब्र बढ़ाता रहता है, जिससे सब किया-कराया ज़ाया हो जाता है। नतीजा यह होता है कि अल्लाह के रास्ते में हमा तन मश्ग़ूल आदमी एक दुनियादार इंसान

के दर्जे से भी गिर जाता है और मुहज़्ज़ब होने के बजाए बातिनी रज़ाइल का मजमूआ बन जाता है, क्योंकि मक़्सूद तो बन्दगी थी, न कि ख़ुदाई और बन्दगी का तक़ाज़ा यह है कि बन्दा अपनी आजिज़ी, ज़िल्लत, तवाज़ोअ व गुमनामी में ज़्यादा से ज़्यादा पुख़्ता हो, लेकिन होता यह है कि वह किब्र व उज्ब, जाह और शोहरत पसन्दी में पड़ जाता है और इन रज़ालतों में दुनियादार आदमी को भी मात कर देता है, क्योंकि इल्म व अमल के धोखे में डालकर शैतान उसे उन मरज़ों का एहसास ही नहीं होने देता और जब कभी मुआशरत और मामलात में उसके छिपे हुए रज़ाइल का इज़्हार होता है तो देखने वाले हैरान रह जाते हैं कि इतने मुत्तक़ी बुज़ुर्ग की ये हरकतें! इसीलिए आम तौर पर अल्लाह के वलियों को देखा है कि उनको इस मरज़ वाले मुत्तक़ी से क़ल्बी तौर पर बहुत दूरी होती है, चाहे उनकी ज़ाहिर शरअ के मुताबिक़ शक्ल व सूरत की बुनियाद पर उनका एहतराम भी करते हों।

इसलिए जो सआ़दतमन्द हज़रात वसूल इलल्लाह की इस्तेसाद हासिल करने के लिए इस सुलूक व मारफ़त की राह को अख़्तियार करें, उनके लिए तह्ज़ीब अख़्लाक़ी ज़रूरी हुआ।

इस बारे में इमाम रब्बानी हज़रत मौलाना रशीद अहमद गंगोही नव्वरल्लाहु मरक़दहू का इर्शाद है कि पहले बुज़ुर्ग अख़्लाक़े सय्यिआ को छुड़ाने की मेहनतें किया करते थे, ताकि यह काम (वसूल इलल्लाहि) आसान हो जाए, बाद के, ख़ास तौर से हमारे सिलसिले के बुज़ुर्गों ने यह तरीक़ा पसन्द किया कि ज़िक्र की इस क़दर कसरत करे कि ये अख़्लाक़े ज़मीमा ज़िक्र के नीचे दब जाएं और ज़िक्र तमाम बातों पर ग़ालिब आ जाए।

अख़्लाक़े सय्यिआ बहुत से हैं, मगर अक्सर ने दस में समेट दिया है, फिर दसों का ख़ुलासा तकब्बुर बताया है। अगर यह दूर हो जाए तो बाक़ी ख़ुद दूर हो जाते हैं। जैसे 'उज्ब' क्या है अपने कमाल को ख़ुदा की देन के बजाए ख़ुद अपना कमाल समझना। 'रिया' का मंशा क्या है? लोगों की नज़र में अपनी बड़ाई चाहना। 'हुब्बे जाह' क्या है? लोगों की तस्ख़ीर और उनसे अपनी ताज़ीम चाहना। हुब्बे माल का मंशा भी अपनी बड़ाई का सामान जमा करना होता है। नफ़ा की बातें भी अक्सर अपनी शान ही के लिए की जाती हैं। इसी तरह गुस्से का मंशा भी अक्सर किब्र ही होता है। अक्सर गुस्सा में कहता है कि तू जानता नहीं है कि मैं कौन हूं? इसीलिए जब किसी से अपने को छोटा समझता हो तो उस पर गुस्सा नहीं होता। अगर गुस्से का इज़्हार नहीं हो सकता और बदला लेने का मौक़ा नहीं मिलता तो उससे दिल में बुग़्ज़ और हसद पैदा हो जाता है। इसी तरह हिर्स, झूठ, बुख़्ल, तमा, ग़ीबत और ख़ुशामद वग़ैरह सबकी वजह किब्र ही होती है। इसलिए इस रिसाले में उम्मुल अमराज़ का जो कि राहे सुलूक की सबसे बड़ी रुकावट और सबसे बड़ी चट्टान है, उसी को बयान किया जाएगा।

यह सारी तह्रीर बुज़ुर्गों की किताबों से मुख़्तसर तौर पर नक़ल की हैं। बड़ी किताबों का मुताला करना तो दुश्वारी से ख़ाली नहीं है और इसके बरख़िलाफ़ यह रिसाला मुख़्तसर भी है और मज़्मून निहायत अहम और ज़रूरी भी, इसलिए मुम्किन है कि इख़्तिसार की वजह से इसका मुताला आसानी से हो सके और मरज़ के एहसास के बाद उसके इलाज की तरफ़ मुतवज्जह होना नसीब हो जाए। अल्लाह तआला इस अह्क़र को भी इस मुह्लिक बीमारी से निजात

अता फ़रमाए कि बन्दा ख़ुद इस बीमारी में दूसरे अज़ीज़ों-दोस्तों से ज़्यादा गिरफ़्तार है और यह रिसाला लिखने का अव्वल मक़्सद अपनी इस्लाह है और दुआ है कि अल्लाह तआला अपनी कुदरते कामिला और रहमते वासिआ के सदक़े में इसको औरों के लिए भी ज़्यादा से ज़्यादा नाफ़े बनाए। वमा ज़ालि-क अलल्लाहि बिअज़ीज़०

इस रिसाले में पहली फ़स्ल तकब्बुर की मज़म्मत, दूसरी फ़स्ल में अलामाते तकब्बुर, तीसरी फ़स्ल में तकब्बुर का इलाज और ज़रूरी तंबीहात और चौथी फ़स्ल मुत्तक़ी हज़रात के लिए लम्हा-ए-फ़िक्रीया है।

इस नाकरा का यह रिसाला 'उम्मुल अमराज़' के नाम से पहले छप चुका है। उसी को अब कुछ इज़ाफ़े के साथ दोबारा शाया किया जा रहा है।

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

नहमदुहू व नुसल्ली अला रसूलिहिल करीम०

पहला हिस्सा

तकब्बुर की मज़म्मत

हज़रत शेख़ुल हदीस साहब मद्द ज़िल्लहुल आली 'शरीअ़त व तरीक़त' में लिखते हैं कि सारे गुनाहों में तकब्बुर सिर्फ़ मेरी निगाह ही में नहीं, बल्कि क़ुरआन व हदीस के इर्शादात में सबसे सख़्त मरज़ है और तरीक़त में तो बहुत ही मुह्लिक है। इमाम ग़ज़्ज़ाली रहमतुल्लाहि अलैहि ने 'एह्याउल उलूम' में बहुत अहमियत से मुस्तक़िल किताब इसके बारे में ज़िक्र फ़रमाई। वह लिखते हैं कि अल्लाह ने क़ुरआन पाक में कई जगह किब्र की मज़म्मत बयान फ़रमाई है। अल्लाह तआला का इर्शाद है—

سَاَصْرِفُ عَنْ اٰیٰتِیَ الَّذِیْنَ یَتَكَبَّرُوْنَ فِی الْاَرْضِ بِغَیْرِ الْحَقِّ

मैं ऐसे लोगों को अपने हुक्मों से बरगश्ता (हटा हुआ) ही रखूंगा जो दुनिया में तकब्बुर करते हैं, जिसका उनको कोई हक़ हासिल नहीं है।

(सूरा आराफ़, रुकूअ 17, बयानुल क़ुरआन)

क्योंकि अपने को बड़ा समझना हक़ उसका है जो वाक़ई में बड़ा है, वह एक ख़ुदा की ज़ात है। (बयानुल क़ुरआन)

दूसरी जगह इर्शाद है—

كَذَالِكَ يَطْبَعُ اللّٰهُ عَلٰى كُلِّ قَلْبِ مُتَكَبِّرٍ جَبَّارٍ○

इसी तरह अल्लाह तआला हर मग़रूर और जाबिर के पूरे क़ल्ब पर मुहर कर देते हैं।

(बयानुल क़ुरआन)

और इर्शाद है—

وَاللّٰهُ لَايُحِبُّ الْمُتَكَبِّرِيْنَ○

यक़ीनी बात है कि अल्लाह तकब्बुर करने वालों को पसन्द नहीं करते।

(बयानुल क़ुरआन)

और इर्शाद है—

وَقَالَ رَبُّكُمُ ادْعُوْنِيْ اَسْتَجِبْ لَكُمْ اِنَّ الَّذِيْنَ يَسْتَكْبِرُوْنَ عَنْ عِبَادَتِيْ سَيَدْخُلُوْنَ جَهَنَّمَ دَاخِرِيْنَ○

और तुम्हारे परवरदिगार ने फ़रमाया है कि मुझे पुकारो, मैं तुम्हारी दर्ख़्वास्त क़ुबूल कर लूंगा। जो लोग मेरी इबादत से (जिसमें दुआ भी दाख़िल है) सरताबी करें, वे बहुत जल्द ज़लील होकर जहन्नम में दाख़िल होंगे।

(बयानुल क़ुरआन)

और तकब्बुर की मज़म्मत क़ुरआन पाक में बहुत ज़्यादा आई है और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इर्शाद है कि 'जन्नत में वह दाख़िल नहीं होगा जिसके दिल में राई के दाने के बराबर भी किब्र होगा।'

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इर्शाद नक़ल किया गया है कि अल्लाह तआला फ़रमाते हैं कि बड़ाई मेरी चादर है और अज़्मत (बुज़ुर्गी) मेरा इज़ार है, तो जो कोई आदमी इन दोनों चीज़ों में से किसी में मुझसे झगड़ा करेगा, तो उसको जहन्नम में डाल दूंगा और ज़रा परवाह नहीं करूंगा और एक हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इर्शाद नक़ल किया कि आदमी अपने नफ़्स को बढ़ाता रहता है, यहां तक कि जब्बारीन में लिख दिया जाता है और जो अज़ाब उनको होता है, वही उसको भी मिलता है।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इर्शाद है कि क़ियामत के दिन जहन्नम में से एक गरदन निकलेगी, जिसके दो कान होंगे, जिनसे वह सुनेगी और दो आंखें होंगी, जिनसे वह देखेगी और एक ज़ुबान होगी, जिससे वह बोलेगी और कहेगी कि मैं तीन आदमियों पर मुसल्लत हूं,—

1. हर मुतकब्बिर ज़िद्दी पर, और
2. हर उस शख़्स पर जो अल्लाह के साथ शिर्क करता हो, और
3. तस्वीर बनाने वाले पर।

और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इर्शाद है कि जन्नत और जहन्नम में मुनाज़रा हुआ। जहन्नम ने कहा, मैं तर्जीह दी गई हूं मुतकब्बिर और जब्बार लोगों के साथ और जन्नत ने कहा कि मैं ऐसे लोगों के साथ तर्जीह दी गई हूं जो कमज़ोर और गिरे पड़े और भोले-भाले होंगे।

और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इर्शाद है कि हज़रत नूह अलैहिस्सलातु व स्सलाम ने इंतिक़ाल के वक़्त अपने दो

साहबज़ादों को बुलाया और फ़रमाया कि मैं तुम्हें दो चीज़ों का हुक्म करता हूं और दो चीज़ों से मना करता हूं, शिर्क और किब्र से। (अल-हदीस)

और हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इर्शाद मंक़ूल है कि क़ियामत के दिन जब्बारीन और मुतकब्बिरीन को चींटियों के बराबर कर दिया जाएगा, लोग उनको रौंदते हुए जाएंगे।

इमाम ग़ज़ाली रहमतुल्लाहि अलैहि ने 'एह्याउल उलूम' में बहुत-सी रिवायतों और आसार को किब्र की बुराई में ज़िक्र किए हैं। यह मुख़्तसर रिसाला तो उनका एहाता नहीं कर सकता। इनमें से कुछ नमूने के तौर पर लिखवाता हूं—

हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु तआला का इर्शाद है (इर्शादुल मुलूक, पृ. 114 में इसको मरफ़ूअन नक़ल किया गया है) कि किसी मुसलमान को हक़ीर मत समझो कि सग़ीर मुसलमान भी ख़ुदा के नज़दीक कबीर है।

हज़रत वह्ब रह० फ़रमाते थे कि अल्लाह तआला ने जब जन्नते अदन को पैदा किया, तो उसकी तरफ़ तवज्जोह फ़रमाकर इर्शाद फ़रमाया कि तू हर मुतकब्बिर पर हराम है।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इर्शाद है कि अल्लाह जल्ल शानुहू उस आदमी की तरफ़ निगाह भी नहीं करते जो अपनी इज़ार (लुंगी वग़ैरह) को तकब्बुर के तौर पर घसीटता है और हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इर्शाद है कि एक आदमी जबकि अकड़ कर दो चादरें पहने चल रहा था कि वह अपने आपको उछालने लगा, तो अल्लाह ने उसको ज़मीन में धंसा दिया और वह

क़ियामत तक ज़मीन में धंसता रहेगा।

और हज़रत मुतर्रिफ़ बिन अब्दुल्लाह ने देखा कि मुहल्लब रेशमी जुब्बे में अकड़ कर चल रहा था। उन्होंने उससे कहा कि अल्लाह के बन्दे! यह चाल (अकड़ कर चलना) अल्लाह तआला और उसके रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को नापसन्द है, तो मुहल्लब ने कहा कि तू मुझको पहचानता नहीं कि कौन हूं? उन्होंने कहा कि ख़ूब पहचानता हूं। तेरी इब्तिदा मनी का क़तरा थी और तेरा आख़िर मुरदार होगा, जिससे हर आदमी घिन करेगा और तू इन दोनों हालतों के दर्मियान में अपने पेट में नजासत लिए फिरता है। मुहल्लब अकड़ की चाल छोड़ कर रवाना हो गया।

हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु का इर्शाद है कि जब बन्दा तवाज़ोअ अख़्तियार करता है तो अल्लाह तआला उसका मर्तबा बुलन्द फ़रमाते हैं और फ़रमाते हैं, बुलन्द हो और जब तकब्बुर करे और हद से बढ़े तो अल्लाह तआला उसको गिराते हैं और फ़रमाते हैं कि तू ज़लील हो, फिर वह अपनी निगाह में तो बड़ा होता है और लोगों के नज़दीक ज़लील होता है, यहां तक कि लोगों की निगाह में सुवर से भी ज़्यादा ज़लील हो जाता है।

हज़रत मालिक बिन दीनार रहमतुल्लाह अलैहि फ़रमाते हैं कि अगर कोई आदमी मस्जिद के दरवाज़े पर यह आवाज़ दे कि तुममें जो सबसे बुरा हो, वह बाहर निकल आए, तो ख़ुदा की क़सम, मुझसे कोई आगे नहीं बढ़ेगा। हज़रत अब्दुल्लाह बिन मुबारक को जब यह बात पहुंची तो फ़रमाया कि इसी बात ने तो मालिक को मालिक बना रखा है। (शरीअत व तरीक़त)

तकब्बुर कुफ़्र से भी ज़्यादा शदीद और हक़ क़ुबूल करने में सबसे बड़ी रुकावट है

तकब्बुर एक एतबार से कुफ़्र से भी ज़्यादा शदीद है, इसलिए कि कुफ़्र भी असल में किब्र से ही पैदा होता है। क़ुरआन पाक की बहुत सी आयतें इसकी गवाह हैं, जैसे—

قَالَ الَّذِيْنَ اسْتَكْبَرُوْٓا اِنَّا بِالَّذِيْٓ اٰمَنْتُمْ بِهٖ كٰفِرُوْنَ۔

तकब्बुर करने वालों ने ईमान वालों से कहा कि तुम जिस बात पर ईमान लाते हो, हम तो क़तई तौर पर उसके इंकारी हैं।

इब्लीस को इसी तकब्बुर ने काफ़िर और शैतान बनाया। चुनांचे इर्शाद है—

اَبٰى وَاسْتَكْبَرَ وَكَانَ مِنَ الْكٰفِرِيْنَ۔

उसने न माना और तकब्बुर किया और वह काफ़िरों में से हो गया।

तकब्बुर अज़ाज़ील रा ख़्वार कर्द,
बज़िन्दाने लानत गिरफ़्तार कर्द।

इस सबसे बुरी ख़स्लत की वजह से इंसान हक़ बात को क़ुबूल करने से महरूम हो जाता है और अल्लाह की आयतों और उसके हुक्मों की मारफ़त से दिल अंधा हो जाता है। अल्लाह तआला फ़रमाते हैं—

سَاَصْرِفُ عَنْ اٰيٰتِيَ الَّذِيْنَ يَتَكَبَّرُوْنَ فِي الْاَرْضِ بِغَيْرِ الْحَقِّ
كَذٰلِكَ يَطْبَعُ اللّٰهُ عَلٰى كُلِّ قَلْبِ مُتَكَبِّرٍ جَبَّارٍ○

'मैं ऐसे लोगों को अपने हुक्मों से अलग ही रखूंगा, जो दुनिया में तकब्बुर करते हैं, जिसका उनको कोई हक़ नहीं। यानी जितने घमंडी और सरकश हैं, अल्लाह तआला उनके दिलों पर इसी तरह मुहर लगा देते हैं।'

इसीलिए कहा जाता है कि किब्र कुफ़्र का शोबा है और जिन गुनाहों का ताल्लुक़ किब्र से होता है, वे शैतानी गुनाह कहलाते हैं जिनकी बड़ाई हैवानी गुनाहों से बहुत ज़्यादा है, इसीलिए 'अल-ग़ीबतु अशद्दु मिनज़्ज़िना' फ़रमाया गया। इन शैतानी और जाही गुनाहों से तौबा की तौफ़ीक़ भी कम होती है, क्योंकि उनके बुरा होने पर इल्तिफ़ात भी नहीं होता और हैवानी गुनाहों की बुराई बहुत मारूफ़ और ज़ाहिर होती है, ख़ुद गुनाह करने वाला उसे बुरा समझता है, ग़फ़लत और नफ़्स के ग़लबे की वजह से कर जाता है, लेकिन दिल से शर्मिन्दा होता है और नदामत ही तौबा है, गोया तौबा की बड़ी शर्त नदामत तो मौजूद ही होती है, बाक़ी शर्तें यानी गुनाह से अलग होना और आगे के लिए बचने का अज़्म करना वग़ैरह शर्तें पूरी करके तौबा करना आसान होता है।

तकब्बुर के दुनियावी नुक़्सान

आख़िरत के मामले में बेयक़ीनी, लापरवाई और इसके उलट दुनिया पर यक़ीन और उसकी अज़्मत और मुहब्बत की बुनियाद पर हम लोगों का अमल ऐसा है, जिससे ज़ाहिर होता है कि हम आख़िरत के मामलों का ख़ुदा अलग और दुनिया का ख़ुदा अलग मानते हैं, जैसे आख़िरत के मामलों में गुनाहों से बचने और नेकियां हासिल करने की पूरी कोशिश और तदबीर नहीं करते, बल्कि झूठे

तवक्कुल और बख़्शिश की उम्मीद और अल्लाह के ग़फ़ूरुर्रहीम होने को काफ़ी समझते हैं, मगर दुनिया के मामलों में तवक्कुल के साथ पूरी कोशिश और तदबीर अमल में लाते हैं, बग़ैर कोशिश और अस्बाब के कामियाबी की उम्मीदें बांधने को हिमाक़त समझते हैं, हलाल कमाई को फ़र्ज़ कहते हैं, नुक़्सान पहुंचाने वाली चीज़ इस्तेमाल करके नुक़्सान से बे-ख़ौफ़ होकर अल्लाह को ग़फ़ूरुर्रहीम नहीं कहते। ऐसे आदमी पर नाराज़ होकर हज़रत मौलाना रूम रह० फ़रमाते हैं—

'तेरा हलाल कमाई कहना क्या, तेरा तो ख़ून तक हलाल है कि तू शिर्क और धोखे में पड़ा हुआ है, हालांकि हक़ बात यह है कि ख़ुदा तो एक ही है। अगर तकब्बुर करने में ख़ुदा की नाराज़ी है और वह तकब्बुर करने वाले को जन्नत में दाख़िल नहीं करेगा, तो दुनिया में तकब्बुर करने वाले को इज़्ज़त नहीं देगा। दुनिया की इज़्ज़त भी उसी के देने से हासिल हो सकती है, इसलिए अल्लाह तआला तकब्बुर करने वाले को दुनिया में भी पस्त और रुसवा करेगा।'

हदीस पाक में है, 'मन तवा-ज़-अ लिल्लाहि र-फ़-अ-हुल्लाह' यानी जो अल्लाह के लिए तवाज़ो और आजिज़ी अख़्तियार करेगा, अल्लाह पाक उसे बुलंद कर देते हैं।

यहां सिर्फ़ आख़िरत में बुलन्द करने का ज़िक्र मक़्सूद नहीं है, बल्कि मतलब यह है कि दुनिया व आख़िरत दोनों की बुलन्दी अता फ़रमा देते हैं। तवाज़ो का उलट तकब्बुर है, इसलिए तकब्बुर पर दुनिया व आख़िरत दोनों की ज़िल्लत और पस्ती ज़रूरी है, चुनांचे तकब्बुर करने वालों से दुनिया में हर आदमी बुग़्ज़ रखता है, दिल से कोई भी इज़्ज़त नहीं करता। अगर उस पर कोई मुसीबत आ जाए तो लोग बजाए मदद करने के और ख़ुश होते हैं।

इंफ़िरादी और इज्तिमाई ना इत्तिफ़ाक़ी और लड़ाई-झगड़े की वजह तकब्बुर ही होता है, फिर उससे गुस्सा, जलन और हुब्बे जाह पैदा हो जाते हैं, जिससे सैंकड़ों क़िस्म के दुनिया वाले नुक़्सान उठाने पड़ते हैं। अगर कोई तवाज़ोअ़ को सिर्फ़ दुनिया के फ़ायदों के लिए अख़्तियार करे तो इससे दुनिया की ज़िंदगी भी निहायत मीठी और ख़ुशगवार बन जाती है और अगर अल्लाह तआला की रिज़ा और आख़िरत के लिए तवाज़ो वाला होना नसीब हो जाए तो फिर दुनिया और आख़िरत दोनों ही में सच्ची राहत और बुलन्दी हाथ आ जाती है।

यह अजीब बात है कि इंसान अपनी इज़्ज़त व जाह के लिए तकब्बुर वाले आमाल को करता है, लेकिन इन आमाल और आदतों में इस सबसे बुरी आदत का पाया जाना उसे क़तई तौर पर महसूस नहीं होता और दूसरे लोग उसे फ़ौरन समझ लेते हैं। इसलिए उनकी नज़रों में और भी ज़लील हो जाता है और वजह यह है कि जब इस ऐब की वजह से अल्लाह तआला उससे नाराज़ हैं और मख़्लूक़ के दिल उन्हीं के क़ब्ज़े में हैं, इसलिए वह लोगों को भी उससे नाराज़ कर देते हैं और सब को उससे नफ़रत हो जाती है।

तकब्बुर की तारीफ़

इसके मानी हैं, कमाल की सिफ़तों में अपने आपको औरों से बढ़कर जानना और साथ ही दूसरों को हक़ीर व ज़लील भी समझना। चुनांचे हदीस पाक में किब्र की तारीफ़ यों इर्शाद फ़रमाई गई है—

"الكبر بطر الحق وغمط الناس"

'किब्र हक़ का इंकार और लोगों को हक़ीर समझना है।'

तकब्बुर और तवाज़ो से मुताल्लिक़ दीन के बुज़ुर्गों की बातें और उनकी हिकायतें

हज़रत जुनैद बग़दादी रह० की हिकायत

हज़रत जुनैद बग़दादी रह० के पास एक आदमी बीस साल रहा, एक दिन अर्ज़ किया कि इतनी मुद्दत में मुझे आपसे कुछ हासिल न हुआ। वह आदमी अपनी क़ौम का सरदार और बिरादरी में मुमताज़ था। आप समझ गए कि उसके दिल में बड़ाई है। फ़रमाया, अच्छा एक बात करो। अख़रोटों का एक टोकरा भर कर ख़ानक़ाह के दरवाज़े पर बैठ जाओ और पुकारो कि जो आदमी मुझे एक जूता मारेगा, उसको एक अख़रोट दूंगा, जो दो मारेगा, उसको दो दूंगा, इसी तरह ज़्यादा करते जाओ। जब यह काम कर चुको और अख़रोट का टोकरा ख़ाली हो जाए, तो मेरे पास आओ। उस आदमी ने कहा 'ला इला-ह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह', हज़रत! यह काम तो मुझसे हरगिज़ न होगा। हज़रत जुनैद रह० ने फ़रमाया कि यह वह मुबारक कलिमा है कि अगर सत्तर वर्ष का काफ़िर उसको एक बार दिल की गहराई से पढ़ दे, तो वल्लाह! मोमिन हो जाए, मगर तू इस वक़्त उसके पढ़ने से तरीक़त का काफ़िर हो गया, जा निकल जा। तुझे मुझसे कुछ हासिल न होगा। दूसरे किसी बुज़ुर्ग का नाम लेकर फ़रमाया कि उनके पास एक आदमी मुद्दतों रहा और फिर शिकायत की कि क़ल्ब की हालत दुरुस्त न हुई। शेख़ ने फ़रमाया कि मियां! दुरुस्ती से तुम्हारा क्या मक़्सूद है? उस आदमी ने जवाब दिया कि हज़रत! जो नेमत आप से मिलेगी, आप से लेकर दूसरों को

पहुंचाऊंगा।

शेख़ ने फ़रमाया कि बस इस नीयत ही की तो सारी ख़राबी है कि पहले ही पीर बनने की ठान ली है। इस बेहूदा ख़्याल को जी से निकाल दो और यों ख़्याल करो कि अल्लाह तआला ने जो हमें तरह-तरह की नेमतें दी हैं, उनका शुक्र और बन्दगी हम पर फ़र्ज़ है, पस इस उम्मीद पर जो लोग ज़िक्र व शुग़ल करते और नमाज़ पढ़ते हैं हमें उसका नफ़ा मिले, यह उनकी हिमाक़त है, उनकी नीयत में फ़साद है। कैसा नफ़ा? कहां का अज्र? यह हस्ती, यह जिस्म, ये आंखें, यह नाक, यह कान, यह ज़ुबान, ये हवास अल्लाह तआला ने हमें दे रखे हैं, पहले इनके शुक्रिए से फ़राग़त होले, तो दूसरे नफ़ा और अज्र की उम्मीद करें। (तज़्करतुर्रशीद, भाग 28, पृ० 13)

इक्मालुश्शीम, पृ. 95 में लिखा है कि जिसने अपने लिए तवाज़ोअ़ को साबित किया, वह बेशक मुतकब्बिर है, क्योंकि तवाज़ोअ़ का दावा तो अपनी क़द्र की बुलन्दी के मुशाहदे के बाद होगा। फिर जब तवाज़ोअ़ का अपने लिए दावा किया तो गोया अपने मर्तबे की बुलन्दी का मुशाहदा किया, तो तू मुतकब्बिर हुआ।

ख़ुलासा यह है कि तवाज़ोअ की हक़ीक़त यह है कि अपनी पस्ती और ख़्वारी अपनी नज़र में इस दर्जा हो और अपनी शान के बड़कपन या किसी मंसब व जाह का वस्वसा तक कभी न हो, सर से पैर तक अपने आपको ख़्वार व ज़लील देखे और जिसका यह हाल होगा, वह कभी दावा किसी बात का न करेगा, न तवाज़ोअ़ का और न किसी सिफ़ते महमूद का, इसलिए कि दावा जब कभी होता है, वह अपनी बुलन्दी के मुशाहदे से होता है। हक़ीक़त में तवाज़ोअ़ वाला वह नहीं है कि जब कोई तवाज़ोअ़ करे तो अपने आपको उससे

कमतर और पस्त ख़्याल करे। आम लोग यह समझते हैं कि जो आदमी तवाज़ोअ़ और इंकिसारी का काम करे, वह मुतवाज़ेअ़ है, जैसे कोई अमीर आदमी अपने हाथ से किसी ग़रीब की ख़िदमत करे तो उसको कहते हैं कि बेचारे बड़े मुंकसिर मिज़ाज हैं, हालांकि कभी-कभी उस आदमी के अन्दर तवाज़ोअ़ रत्ती बराबर भी नहीं होती। इसलिए शेख़ रहमतुल्लाहि अलैहि मुतवाज़ेअ़ और ग़ैर मुतावाज़ेअ की हक़ीक़त बयान करते हैं कि मुतावाज़ेअ हक़ीक़त में वह नहीं है कि जब कोई तवाज़ोअ़ का काम करे तो अपने आपको यह समझे कि मैं इस काम से बुलन्द और बालातर हूं, जैसे कुर्सी छोड़ कर फ़र्श पर बैठ गया तो फ़र्श पर बैठने को अपनी क़द्र व मनज़िलत से पस्त समझे और अपने मर्तबे को बुलन्द जाने और यह ख़्याल करे कि मैं तो लायक़ इसी के था कि कुर्सी पर बैठूं, लेकिन यह मैंने तवाज़ो अख़्तियार की है और बहुत अच्छा काम किया, तो यह शख़्स मुतकब्बिर है कि उसके दिल में क़द्र व मंज़िलत है, बल्कि मुतवाज़ेअ वह है कि तवाज़ोअ का काम करके उस काम से अपने आपको पस्त और ज़लील जाने, जैसे फ़र्श पर बैठे और यह जाने कि मैं तो ऐसा ख़्वार हूं कि इस फ़र्श पर बैठने की लियाक़त नहीं रखता, ख़ाली ज़मीन पर बैठने के लायक़ हूं या किसी ग़रीब की ख़िदमत की और क़ल्ब की यह कैफ़ियत हो कि इस ग़रीब की ख़िदमत क़ुबूल कर लेने को अपना फ़ख़्र समझे और अपने आपको उसका अह्ल न जाने।

हज़रत शेख़ुल हदीस के इर्शादात

हज़रत शेख़ुल हदीस साहब फ़रमाते हैं कि किब्र का मअ़ला शरीअ़त में बहुत सख़्त है और तरीक़त में इससे भी ज़्यादा। अकाबिर का मामूल हमेशा देखा और ख़ूब देखा कि जिसको सुलूक के दौरान

ख़िलाफ़त का ख़्याल भी आ जाता था, वे हज़रात उसको हुसूले निस्बत के बावजूद ख़िलाफ़त देने में बहुत पसोपेश करते थे और ख़िलाफ़त मिल जाने के बाद भी किब्र के आसार शुरू होने पर अगर तंबीह से काम चल जाता तो ख़ैर, वरना इजाज़त को मंसूख़ कर देते थे। मैंने अकाबिर के कुछ ख़ुलफ़ा को, जो कि बहुत ज़ाकिर व शाग़िल थे, इस किब्र की वजह से गिरते हुए देखा है। ख़िलाफ़त के बाद इससे बचने की और भी ज़्यादा ज़रूरत है। अगर शेख़ की तरफ़ से ख़िलाफ़त मंसूख़ भी न की जाए, तो सिलसिला नहीं चलता और उनके मुरीदीन बहुत कम कामियाब होते हैं। अल्लाह तआला मुझे भी इस मुह्लिक मरज़ से नजात अता फ़रमाए और मेरे दोस्तों को ख़ास तौर से और तमाम सालिकीन को सिर्फ़ अपने फ़ज़्ल से महफ़ूज़ रखे, बहुत ही ख़तरनाक मामला है।

किब्र का मामला तो बड़ा है, इससे भी बहुत हल्की चीज़ उज्ब है, वह भी निहायत बचने की चीज़ है, क्योंकि इसके नतीजे भी कभी-कभी बर्दाश्त के क़ाबिल नहीं रह जाते हैं। चुनांचे इसी उज्ब की बदौलत हुनैन की लड़ाई में हुज़ूर सैयदुल कौनैन सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के तशरीफ़ फ़रमा होने के बावजूद सहाबा किराम रज़ि० को सख़्त परेशानी उठानी पड़ी। सूरः तौबा में आधा पारा के क़रीब तीसरे रुकूअ में यह क़िस्सा मुफ़स्सल मज़्कूर है और बयानुल क़ुरआन में मुख़्तसर ज़िक्र किया गया है। अल्लाह तआला का इर्शाद है कि हुनैन के दिन भी, जिसका क़िस्सा अजीब व ग़रीब है, तुमको ग़लबा दिया, जबकि यह वाक़िया हुआ था कि तुमको अपने मज्मे की कसरत से गुरूर हो गया था, फिर वह कसरत तुम्हारे कुछ काम न आई और कुफ़्फ़ार के तीर बरसाने से ऐसी परेशानी हुई कि तुम पर

ज़मीन बावजूद अपनी इस फ़राख़ी के तंगी करने लगी। फिर आख़िर तुम पीठ देकर भाग खड़े हुए।

इसके बाद अल्लाह तआला ने अपने रसूल सल्ल० के क़ल्ब पर और दूसरे मोमिनों के दिलों पर अपनी तरफ़ से तसल्ली नाज़िल फ़रमाई और मुर्तद्दीन की लड़ाई में हज़रत ख़ालिद बिन वलीद रज़ि० का इर्शाद कि मुसीबत गोयाई के साथ वाबिस्ता है, मुर्तद्दीन की लड़ाई में अव्वल तुलैहा कज़्ज़ाब से मारका हुआ, जिसमें बहुत से लोग भाग गए, कुछ मारे गए, ख़ुद तुलैहा भी भाग गया, इसमें मुसलमानों के हौसले बहुत बढ़ गए, इसके बाद मुसैलमा की जमाअत से लड़ाई हुई, जिसमें बहुत सख़्त मुक़ाबला हुआ, हज़ारों आदमी उस जमाअत में क़त्ल हुए और मुसलमानों की भी बड़ी जमाअत शहीद हुई। हज़रत ख़ालिद बिन वलीद रज़ि० इन मारकों में सिपहसालार थे, फ़रमाते हैं कि जब हम तुलैहा से फ़ारिग़ हो गए और उसकी शौकत कुछ ज़्यादा न थी तो मेरी ज़ुबान से एक कलिमा निकल गया 'और मुसीबत गोयाई के साथ वाबिस्ता है।' (मैंने कह दिया था), बनी हुनैफ़ा हैं ही क्या चीज़? ये भी ऐसे ही हैं जैसे लोगों से हम निमट चुके, (यानी तुलैहा की जमाअत) मगर जब हम उसकी जमाअत से भिड़े तो हमने देखा कि वे किसी के मुशाबह नहीं हैं। सूरज निकलने से लेकर अस्र के वक़्त तक वे बराबर मुक़ाबला करते रहे। हज़रत ख़ालिद रज़ि० ख़ुद इक़रार करते हैं कि एक जुम्ला ज़ुबान से निकल गया था, जिसकी वजह से इतने सख़्त मुक़ाबले की नौबत आई। इसी वजह से हज़रत ख़ुलफ़ाए राशिदीन जब किसी फ़ौज वग़ैरह को कामियाबी की मुबारकबाद देते थे तो बड़ी ताकीद इसकी फ़रमाते थे कि उज्ब पैदा न हो। एतदाल पृ. 127 पर इसके बहुत से क़िस्से लिखे हैं।

इज्ज़ व इंकिसारी

इसके मुक़ाबले में इज्ज़ व इंकिसारी अल्लाह को बहुत पसन्दीदा और महबूब हैं जो हमेशा अंबिया अलैहिमुस्सलाम और औलिया-ए-इज़ाम का शिआर रहा हैं। मक्का की जीत के मौक़े पर सरवरे कायनात सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जब मक्का मुकर्रमा में दाख़िल हुए तो मुबारक सर झुका हुआ था, सरापा इज्ज़ व इंकिसार थे। एक-एक अदा से तवाज़ोअ और अफ़्व का ज़ुहूर हो रहा था, हालांकि यह उस वक़्त के सबसे बड़े दुश्मन के मुक़ाबले में सबसे बड़ी फ़त्ह थी। इसका नतीजा यह निकला कि सरकश और हद दर्जा मुआनिद मुतीअ व मिनक़ाद होते चले गए और उनको यक़ीन हो गया कि परवरदिगारे आलम की तरफ़ से रसूले अक्रम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम सरापा शफ़क़त व रहमत हैं और बहुत बड़ी दौलत व नेमत (ईमान) हम को अता फ़रमा रहे हैं और यह कि यह इक़्तिदार और मुल्कगीरी की जंग नहीं।

हज़रत शेख़ुल हिन्द का तबई मज़ाक़

असीरे मालटा पृ. 159 में लिखा है कि हज़रत शेख़ुल हिन्द का तबई मज़ाक़ था कि वे ग़रीबों और मामूली आदमियों में रहना पसन्द फ़रमाते थे और अपनी आदत, लिबास, चाल, मामले वग़ैरह इस क़िस्म का रखना चाहते थे। अहले दुनिया, अमीरों और तकल्लुफ़ वालों से घबराते थे। तालिब इल्मों से बेहद उन्स था। रेल में तीसरे डिब्बे में सफ़र करना पसन्द फ़रमाते थे, मगर इसके बाद भी तबियत में सफ़ाई भी बहुत ज़्यादा थी, सफ़र में आम तौर से काफ़ूर साथ रखते थे, क्योंकि बहुत से मैले-कुचैले आदमियों की बदबू से सख़्त

तक्लीफ़ होती थी। इत्र और वह भी गुलाब का, निहायत मरग़ूब था। सादगी और सादा लोगों से मेल-मिलाप और उनके साथ उठना-बैठना हद से ज़्यादा पसन्द था। अपने आपको बनाना, वज़ादारी और तकल्लुफ़ से फ़ितरी तौर पर नफ़रत थी।

हज़रत नानौतवी रह० का क़ौल

बार-बार हज़रत नानौतवी रह० का क़ौल नक़ल फ़रमाया करते थे कि आम लोगों का बैतुल ख़ला (लेट्रिन) भी बरकत वाला है, यानी वे लेट्रिन जो ख़ास लोगों के लिए और अमीरों के लिए बनाए जाते हैं, अगरचे वे साफ़-सुथरे और बदबू से बहुत ज़्यादा पाक होते हैं, मगर उसमें नहूसत और ख़राबी होती है, अवाम के पाख़ानों के ख़िलाफ़।

सच तो यह है कि नफ़्स को अपनी बड़ाई मरग़ूब है और वह अपनी ऊंचाई और बड़ाई का हद से ज़्यादा चाहने वाला है और यही तमाम बुराइयों और दुनिया और आख़िरत की रूसियाही की जड़ है, इसलिए अह्लुल्लाह और कामिलीन हज़रात, जिन मामलों में थोड़ी सी भी नफ़्स की तअल्ली और उसकी बरतरी महसूस करते हैं, उसको बुराई की नज़र से देखते हैं और जिसमें कस्रे नफ़्सी और ज़िल्लते ज़ाहिरी नज़र आती है, उसको महबूब रखते हैं। ज़ाहिरी बदबू और कसाफ़ते माद्दी मानवी बदबू और कसाफ़ते रूहानी के मुक़ाबले में कोई चीज़ नहीं है और न कोई हैसियत रखती है। अमीरों का बैतुल ख़ला नफ़्स में उज्ब और रऊनत पैदा करता है और आम इंसानों का बैतुल ख़ला यह चीज़ पैदा नहीं करता, बल्कि इसके ख़िलाफ़ तवाज़ोअ और नफ़्स की हिक़ारत दिखलाता है और इंसानों को किसी

क़दर अपनी हालत और नजासत को भी याद दिलता है। जब पाख़ाने की यह हालत है तो दूसरी चीज़ें, तौर-तरीक़े, मकान, पहनावे को इसी पर क़ियास फ़रमा लीजिए।

फ़ुक़हा ने हौज़ से वुज़ू करने को अफ़ज़ल लिखा है

फ़रमाते थे कि फ़ुक़हा ने हौज़ से वुज़ू करने को अफ़ज़ल लिखा है। शरह करने वाले फ़रमाते हैं कि इसकी वजह यह है कि मोतज़ला के ख़िलाफ़ और उनकी दिल शिकनी की जाए, मगर कहीं मंक़ूल नहीं कि मोतज़ला ने हौज़ से वुज़ू करने पर किसी क़िस्म का इंकार किया हो। मेरी समझ में तो आता है कि नफ़्स की इस्लाह इसमें बहुत ज़्यादा होती है और उस पर निहायत शाक़ भी गुज़रता है, क्योंकि एक ही जगह से एक शख़्स ने पांव धोया है, दूसरा आता है और उस पानी को मुंह और नाक में डालता और उससे चेहरे को धोता है, इसलिए नफ़्से अम्मारा वाले और बड़े-बड़े दुनियादार उससे वुज़ू करने में अपनी हतक और बे-इज़्ज़ती समझेंगे, शायद हौज़ में वुज़ू करना इसी वजह से निहायत अफ़ज़ल है। सच तो यह है कि ये दोनों उस्ताद-शागिर्द यानी हज़रत मौलाना नानौतवी क़द्दसल्लाहु सिर्रहू और हज़रत मौलाना शैख़ुल हिन्द रहमतुल्लाहि अलैहि इस बात की तलाश में रहते थे कि किस बात में फ़रोतनी, नफ़्स कुशी, ख़मूल, तवाज़ो, इन्किसारी होती है, इसके लिए बड़ी कोशिशें करते थे और जिस चीज़ में रऊनत, जाहतलबी, नफ़्सपरस्ती, शोहरत, तअल्ली ख़ुद्दारी होती थी, उससे कोसों दूर भागने की फ़िक्र करते थे, फिर भी यह न था कि आम क़ायदे के मुवाफ़िक़ ज़ुबानी और ज़ाहिरी जमा ख़र्च हो, यों तो हम सभों की हालत है कि अपने आपको क़मतरीन

ख़लाइक़, सगे दुनिया, ज़र्रा बे-मिक़्दार, नाबकार, नंगे ख़लाइक़ वग़ैरह कहते रहते हैं और लिखते भी हैं, मगर यह सब कार्रवाई आम तौर से मुनाफ़िक़ाना और रियाकारी की बुनियाद पर होती है, दिल में इसका ज़रा भी असर नहीं होता, बल्कि इसके उलट यही ख़्याल दिल में जागज़ीं रहता है कि 'हमी हैं, दूसरा कोई नहीं' और इसी वजह से दूसरों की ऐबजूई, उनकी नुक्ताचीनी, ग़ीबत वग़ैरह होती रहती है।

किसी अपने ज़माने की, बल्कि कभी-कभी अपने से पहलों की कोई भलाई सुन लेते हैं तो बदन में आग-सी लग जाती है और तरह-तरह से उसमें ऐब निकाले जाते हैं। कोशिश की जाती है कि यह आदमी लोगों की नज़रों से गिर जाए। अगर कोई हम को जाहिल, नालायक़, अहमक़, गधा, कुत्ता, सुअर वग़ैरह कह देता है तो आग बगोला हो जाते हैं। हम कमतरीन ख़लाइक़ (पैदाकी हुई चीज़ों में कमतर) कहने में सच्चे थे, तो गधा-कुत्ता वग़ैरह कहने से क्यों बुरा मानते हैं? आख़िर ख़लाइक़ में से तो वे भी हैं, फ़क़त।

हज़रत शेख़ ज़ा-द मज्दुहू फ़रमाते हैं कि तकब्बुर उम्मुल अमराज़ है और बड़े से बड़े को भी गिरा देता है। सुलूक के बहुत से मशाइख़ को भी इस मुह्लिक मरज़ की वजह से गिरते हुए देखा है।

शेख़ अबू अब्दुल्लाह उन्दुलुसी का वाक़िया

और शेख़ अबू अब्दुल्लाह उन्दुलुसी का वाक़िया मेरे दिल में ऐसा जमा हुआ है और चुभा हुआ है कि अक्सर बे-अख़्तियार क़लम की ज़ुबान पर आ जाता है। मैं सालिकों और तसव्वुफ़ से ज़रा-सा ताल्लुक़ रखने वालों के बारे में भी यह चाहता हूं कि हर एक के दिल में उतरा हुआ हो।

शेख़ अबू अब्दुल्लाह मशहूर शेख़ुल मशाइख़, उन्दुलुस के अकाबिर औलियउल्लाह में हैं। हज़ारों ख़ानक़ाहें उनके दम से आबाद, हज़ारों मदरसे उनके फ़ैज़ से जारी, हज़ारों शागिर्द, हज़ारों मुरीद। आपके मुरीदों की तायदाद बारह हज़ार तक बताई जाती है। एक बार सफ़र के इरादे से तशरीफ़ ले गए, हज़ारों मशाइख़ और उलेमा साथ में हैं, जिनमें हज़रत जुनैद बग़दादी रह० और हज़रत शिबली रह० भी हैं। हज़रत शिबली रह० का बयान है कि हमारा क़ाफ़िला निहायत ही ख़ैरात व बरकात के साथ चल रहा था कि ईसाइयों की एक बस्ती पर गुज़र हुआ। नमाज़ का वक़्त हो रहा था, बस्ती में पानी न मिला, बस्ती के बाहर एक कुएं पर कुछ लड़कियां पानी भर रही थीं। हज़रत शेख़ की निगाह एक लड़की पर पड़ी। हज़रत शेख़ की निगाह उस पर पड़ते ही चेहरा बदलने लगा। हज़रत शिबली रह० फ़रमाते हैं कि शेख़ उसकी बातों के बाद सर झुका कर बैठ गए। तीन दिन पूरे गुज़र गए कि न खाते हैं, न पीते हैं, न किसी से बात करते हैं। हज़रत शिबली रह० कहते हैं कि सब ख़िदमत करने वाले परेशान हाल थे। तीसरे दिन मैंने जुर्रात करके अर्ज़ किया, या शेख़! आपके हज़ारों मुरीद आपकी इस हालत की वजह से परेशान हैं। शेख़ ने उन लोगों की तरफ़ मुतवज्जह होकर कहा, मेरे प्यारो! मैं अपनी हालत तुमसे कब तक छिपाऊं? परसों मैंने जिस लड़की को देखा है, उसकी मुहब्बत मुझ पर इतनी ग़ालिब आ चुकी है कि तमाम आज़ा व जवारेह (अंग-प्रत्यंग) पर उसी का तसल्लुत है। अब किसी तरह मुम्किन नहीं कि इस सरज़मीन को मैं छोड़ दूं।

हज़रत शिबली ने फ़रमाया कि 'ऐ मेरे सरदार! आप इराक़ वालों के पीर व मुर्शिद, इल्म व फ़ज़्ल, ज़ोह्द व इबादत में बहुत मशहूर हैं।

आपके मुरीदों की तायदाद बारह हज़ार से आगे जा चुकी है, क़ुरआन अज़ीज़ के तुफ़ैल, हमें और इन सबको रुसवा न कीजिए।'

शेख़ ने फ़रमाया, 'मेरे अज़ीज़! मेरा तुम्हारा नसीब, ख़ुदाई तक़्दीर हो चुकी है, मुझसे विलायत का लिबास वापस ले लिया गया है और हिदायत की अलामतें उठा ली गई हैं।' यह कहकर रोना शुरू किया और कहा, 'ऐ मेरी क़ौम! क़ज़ा व क़द्र नाफ़िज़ हो चुकी है, अब काम मेरे बस का नहीं है।'

हज़रत शिबली रह० फ़रमाते हैं कि हमें इस अजीब वाक़िए पर बड़ा सख़्त ताज्जुब हुआ और हसरत से रोना शुरू किया। शेख़ भी हमारे साथ रो रहे थे, यहां तक कि ज़मीन आंसुओं के उमंड आने वाले सैलाब से तर हो गई। इसके बाद हम मजबूर होकर अपने वतन बग़दाद की तरफ़ लौटे। जब हमने वापस आकर ये वाक़िए सुनाए तो शेख़ के मुरीदों में कोहराम मच गया। कुछ आदमी तो उसी वक़्त ग़म व हसरत में आलमे आख़िरत को सिधार गए और बाक़ी लोग गिड़गिड़ा कर ख़ुदा-ए-बेनियाज़ की बारगाह में दुआएं करने लगे कि ऐ मुक़ल्लबल क़ुलूब! शेख़ को हिदायत कर और फिर अपने मर्तबे पर लौटा दे। इसके बाद तमाम ख़ानक़ाहें बन्द हो गईं और हम एक साल तक उसी हसरत व अफ़सोस में शेख़ के फ़िराक़ में लोटते रहे। एक साल के बाद जब मुरीदों ने इरादा किया, कि चल कर शेख़ की ख़बर लें कि किस हाल में हैं, तो हमारी एक जमाअत ने सफ़र किया, उस गांव में पहुंच कर लोगों से शेख़ का हाल मालूम किया, तो गांव वालों ने बताया कि वह जंगल में सुअर चरा रहा है। हमने कहा, ख़ुदा की पनाह! यह क्या हुआ? गांव वालों ने बताया कि उसने सरदार की लड़की से मंगनी की थी। उसके बाप ने इस शर्त पर मंज़ूर कर लिया

और वह जंगल में सुअर चराने पर मामूर है।

हम यह सुनकर दंग रह गये और ग़म से कलेजे फटने लगे, आंखों से बे-साख़्ता आंसुओं का तूफ़ान उमंडने लगा। मुश्किल से दिल थाम कर उस जंगल में पहुंचे जिसमें वह सुअर चरा रहे थे। देखा तो सर पर ईसाई की टोपी और कमर में जनेऊ बंधा हुआ है और उस असा पर टेक लगाए हुए सुअरों के सामने खड़े हैं जिससे वाज़ और ख़ुत्बे के वक़्त सहारा लिया करते थे, जिसने हमारे घावों पर नमक छिड़कने का काम किया। शेख़ ने हमें अपनी तरफ़ आते हुए देखकर सर झुका लिया। हमने क़रीब पहुंच कर अस्सलामु अलैकुम कहा। शेख़ ने किसी क़दर दबी आवाज़ से व अलैकुम अस्सलाम कहा। हज़रत शिबली रह० ने अर्ज़ किया कि ऐ शेख़! इस इल्म व फ़ज़्ल और हदीस व तफ़्सीर के होते हुए आज तुम्हारा क्या हाल है?

शेख़ ने फ़रमाया, 'मेरे भाइयो! मैं अपने अख़्तियार में नहीं। मेरे मौला ने मुझे जैसा चाहा, वैसा कर दिया और इस क़दर मुक़र्रब बनाने के बाद जब चाहा कि मुझे अपने दरवाज़े से दूर फेंक दे, तो उसकी क़ज़ा को कौन टालने वाला है? ऐ अज़ीज़ो! बेनियाज़ ख़ुदा के क़हर व ग़ज़ब से डरो, अपने इल्म व फ़ज़्ल पर मग़रूर न हो।' इसके बाद आसमान की तरफ़ नज़र उठा कर कहा कि, 'ऐ मेरे मौला! मेरा गुमान तो तेरे बारे में ऐसा न था कि तू मुझको ज़लील व ख़्वार करके अपने दरवाज़े से निकाल देगा।' यह कहकर इस्तिग़ासा करना और रोना शुरू कर दिया और फ़रमाया, 'ऐ शिबली! अपने ग़ैर को देखकर इबरत हासिल कर।'

शिबली ने रोते हुए अर्ज़ किया, ऐ हमारे परवरदिगार! हम तुझ

ही से मदद मतलब करते हैं और तुझी से इस्तिग़ासा करते हैं और हर काम में हमको तेरा ही भरोसा है। हमसे यह मुसीबत दूर कर दे कि तेरे सिवा कोई दूर करने वाला नहीं।

ख़िनज़ीर उनका रोना और उनकी दर्दनाक आवाज़ सुनते ही उनके पास जमा हो गए और उन्होंने भी रोना-चिल्लाना शुरू कर दिया। उधर शेख़ भी ज़ार-ज़ार रो रहे थे। हज़रत शिबली रह० ने अर्ज़ किया कि शेख़! आप क़ुरआन के हाफ़िज़ थे और क़ुरआन को सातों क़िरातों से पढ़ा करते थे। अब भी उसकी कोई आयत याद है?

शेख़ ने कहा, ऐ अज़ीज़ो! मुझे क़ुरआन में दो आयत के सिवा कुछ याद नहीं रहा। एक तो यह है—

व मंय्युहनिल्लाहु फ़मा लहू मिम्मुक्रिम इन्नल्ला-ह यफ़अ़लु मा यशाउ०

'जिसको अल्लाह ज़लील करता है, उसको कोई इज़्ज़त देने वाला नहीं। बेशक अल्लाह जो चाहता है, करता है।'

और दूसरी यह है—

'वमंय्य-त-बद्दिलल कुफ़-र बिल ईमानि फ़-क़द ज़ल-ल सवाअस्सबील'

जिसने ईमान के बदले में कुफ़्र अख़्तियार किया, तह्क़ीक़ वह सीधे रास्ते से गुमराह हो गया।

हज़रत शिबली रह० ने अर्ज़ किया, 'ऐ शेख़! आपको तीस हज़ार हदीसें सनदों के साथ ज़ुबानी याद थीं, अब उनमें से भी कोई याद है?'

शेख़ ने कहा, सिर्फ़ एक हदीस याद है, यानी 'मन बद-द-ल

दीनहू फ़क्तुलूहु' (जो आदमी अपना दीन बदल डाले, उसको क़त्ल कर डालो।)

हज़रत शिबली रह० फ़रमाते हैं कि हमने यह हालत देखकर शेख़ को वहीं छोड़कर बग़दाद का क़स्द किया। अभी तीन मंज़िल तै करने पाए थे कि तीसरे दिन अचानक शेख़ को अपने आगे देखा कि एक नहर से गुस्ल करके निकल रहे हैं और ऊंची आवाज़ में शहादतैन (दोनों शहादतें)–

اَشْهَدُ اَنْ لَّآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَاَشْهَدُ اَنَّ مُحَمَّدًا رَّسُوْلُ اللّٰهِ۔

'अश्हुद अल-ला इला-ह इल्लल्लाहु व अश्हुद अन-न मुहम्मदन रसूलुल्लाह०' पढ़ते जाते हैं। उस वक़्त हमारी ख़ुशी का अन्दाज़ा वही आदमी कर सकता है जिसको इससे पहले हमारी मुसीबत का अन्दाज़ा हो। बाद में शेख़ से हमने पूछा कि क्या आपकी इस आज़माइश की कोई वजह थी?

फ़रमाया, हां, जब हम गांव में उतरे और बुतख़ानों और गिरजाघरों पर हमारा गुज़र हुआ, आग के पुजारियों और सलीब परस्तों को ग़ैर-अल्लाह की इबादत में मशग़ूल देखकर मेरे दिल में तकब्बुर और बड़ाई पैदा हुई कि हम मोमिन मुवह्हिद (एक ख़ुदा के मानने वाले हैं) और ये कमबख़्त कैसे जाहिल व अहमक़ हैं कि बेहिस व बेशऊर चीज़ों की पूजा करते हैं। मुझे उसी वक़्त एक ग़ैबी आवाज़ दी गई कि ईमान व तौहीद कुछ तुम्हारा ज़ाती कमाल नहीं है कि सब कुछ हमारी तौफ़ीक़ से है, क्या तुम अपने ईमान को अपने अख़्तियार में समझते हो? और अगर चाहो तो हम तुम्हें अभी बतला दें और मुझे उसी वक़्त एहसास हुआ कि गोया एक परिंदा मेरे क़ल्ब से निकल कर उड़ गया जो हक़ीक़त में ईमान था। फ़क़त

मुझे इस सारे क़िस्से में अख़ीर का यह मज़्मून लिखवाना था, वरना असल वाक़िया तो आपबीती में तफ़्सील से आ चुका है और सूफ़ी इक़बाल साहब ने उसी से 'अकाबिर के सुलूक' में नक़ल किया है और हकीम इलयास ने इस वाक़िए को 'शेख़ उन्दुलुस का एक अजीब व इबरतनाक वाक़िया' के नाम से मुस्तक़िल रिसाले की सूरत में भी शाया किया है। यह तकब्बुर ऐसी बुरी बला है कि शेख़ुल मशाइख़ तक को भी कहां से कहां पहुंचा दिया। अल्लाह तआला ही महज़ अपने फ़ज़्ल से इस बड़ी मुसीबत से बचाए। आमीन।

एक कीमियागर का वाक़िया

हज़रत शेख़ुल हदीस ज़ा-द मज्दुहू तहरीर फ़रमाते हैं कि एक अजीब क़िस्सा बड़ी इबरत का मैंने अपने वालिद साहब से कई बार सुना। एक बादशाह था, उसको कीमिया की धुत थी और यह सभी जानते हैं कि जिसको कीमिया का मरज़ पड़ जाता है, उसकी अक़्ल व होश शतरंज के खिलाड़ियों से भी ज़्यादा खो जाती है। मैंने अपने कई दोस्तों को देखा जिनको इसका चस्का था। जब उनका रास्ते में कहीं साथ हो जाता, वह क़दमों पर निगाह जमाए कभी उधर, कभी इधर देखते जाया करते और जहां कहीं शुबहा हो जाता, वहीं खड़े होकर और बूटियों को मल-मल कर सूंघते थे, बादशाह भी इसी फ़िक्र में हर वक़्त रहता, वज़ीरों का नातक़ा बंद रखता, एक वज़ीर ने कहा कि हुज़ूर इतने फ़िक्रमंद रहते हैं, हुज़ूर की सलतनत में तो फ्लां सक़्क़ा, जो फ्लां जगह रहता है, बड़ा माहिर है, उसे ख़ूब बनानी आती है। बादशाह को बड़ी हैरत हुई, कहने लगा, हमारी सलतनत में इसका जानने वाला है और हम इतने परेशान हो रहे हैं, चार संतरी

भेज दिए कि उस सक़्क़े को पकड़ लाओ, सक़्क़ा पेश हुआ, कपड़े फटे हुए, लंगोट बंधा हुआ, बदन पर बजाए कुरते के, एक गाढ़े की कमरी बहुत फटी हुई। बादशाह को उसकी शक्ल देखते ही पहले तो बहुत नफ़रत हुई, उससे पूछा कि तुझे कीमिया आती है? उसने हाथ जोड़कर कहा, हुज़ूर तो बादशाह सलामत हैं, समझदार हैं, दुनिया के हाकिम हैं, अगर मुझे कीमिया आती तो मेरा यह हाल होता जो हुज़ूर देख रहे हैं? मैं भी कोई महल ऐसा ही बनाता जैसा हुज़र का है। बात माक़ूल थी, बादशाह की समझ में भी आ गई, छोड़ दिया और उस वज़ीर को बुलाकर डांटा। वज़ीर ने क़सम खाई कि हुज़ूर! मुझे तो ख़ूब तजुर्बा है, उसे ख़ूब आती है। बादशाह ने सलतनत का इंतिज़ाम वली अह्द के सुपुर्द किया, बदन पर भभूत मला, ताकि पहचाना न जाए और उस वज़ीर को साथ लेकर सक़्क़ा के घर पहुंचा, जब उसने घर का निशान बता दिया, वज़ीर को चलता कर दिया—

'चीज़ की मुहब्बत आदमी को अंधा-बहरा कर देती है।'

जब वह सक़्क़ा घर से निकला, यह बैठा रहा। जब वह शाम को पानी डालने जाने लगा, तो उसके साथ हो लिया। कहने लगे, आप तो बूढ़े हो गए हैं, आपको तो बड़ी दिक़्क़त होगी, मैं घर से फ़ालतू हूं, मारा-मारा फिरता हूं। अगर आप मुझे कुछ ठिकाने बता दें, तो मैं ही घरों में पानी डाल आया करूं। सक़्क़ा ने कहा, नहीं भाई! मेरी रोज़ी इसी में है, तू अपना काम कर। कहने लगा, बड़े मियां! तुम मुझे अच्छे ही बहुत लगो, मैं तो तुम्हारी ख़िदमत में रहना चाहता हूं, तुमसे कुछ मांगने का नहीं, न मुझे रोटी चाहिए न और कुछ। शाम को सक़्क़ा जब रोटियां मांग कर लाया तो बादशाह की भी तवाज़ो की, मगर उसने इंकार कर दिया कि मुझे बिल्कुल भूख नहीं, ग़मज़दा

हूं, परेशान हूं, मैं तो कई-कई दिन का फ़ाक़ा करता हूं। सक़्क़े ने बड़े इसरार से दो-चार लुक़्मे खिलाए। यहां फिर मैं यह बात कहूंगा कि एक सक़्क़े की ग़ैरत ने तो गवारा न किया कि एक आदमी उसका काम करे और वह बग़ैर उसके रोटी खा ले, मगर हम लोगों को इसका बिल्कुल यक़ीन नहीं आता कि हम इख़्लास से अल्लाह का काम करें और वह हमें भूखा मार दे। अलबत्ता इतना फ़र्क़ है कि सक़्क़ा आलिमुल ग़ैब नहीं था, इसलिए धोखे में आ गया, मालिक आलिमु ग़ैब है, उसे हक़ीक़ते हाल मालूम है, उसे मालूम है कि कौन वाक़ई इख़्लास से मालिक का काम कर रहा है और कौन धोखे से कर रहा है।

ग़रज़ बादशाह ने सक़्क़े की बहुत ही ख़िदमत की, दिन भर उसका पानी भरता, रात को जब सक़्क़ा लेटता तो उसका ख़ूब बदन दबाता, हट्टा-कट्टा जवान क़वी, सक़्क़े को पांच सात दिन में वह मज़ा आया कि लुत्फ़ आ गया। दो-तीन महीने सक़्क़े ने ख़ूब टटोला, ख़ुशामद की कुछ खा ले, कुछ पैसे मुक़र्रर कर ले। बादशाह ने कहा, जी मियां, मुझे मज़दूरी करनी होती तो दुनिया में बहुत मज़दूरियां हैं। मुझे तो तुम बहुत ही अच्छे लगते हो। मैं तो रास्ते में बैठ गया था, तुम्हारी सूरत मुझे बहुत ही अच्छी लगी। अगला शेर तो मैंने अपने वालिद से नहीं सुना, मगर वाक़िए के मुनासिब था, याद आ गया—

गिरे मेरी नज़रों से ख़ूबाने आलम,
पसन्द आ गई तेरी सूरत कुछ ऐसी।

दैर व हरम में रोशनी शम्स व क़मर से हो तो क्या
मुझको तो तुम पसन्द हो, अपनी नज़र को क्या करूं?

गोरे-काले पर नहीं मौक़ूफ़,
दिल के आने के तरीक़े निराले हैं।

दीदे लैला के लिए दीदा-ए-मजनूं है ज़रूर,
मेरी आंखों से कोई देखे तमाशा उनका।

ग़रज़ बादशाह ने वह मुहब्बत के जज़्बे दिखाए कि सक़्क़ा भी सोच में पड़ा गया कि यह बुढ़ापे में आशिक़े ज़ार कहां से पैदा हो गया। कभी कहता, अब्बा जी! लुंगी बांध के कपड़े दे दो, मैं धो लाऊं। अरे भाई! मैं तो ख़ुद धो लूंगा। अजी! तुम बुढ़ापे में कहां तक्लीफ़ उठाओगे। इनमें जुएं ढूंढ़ता। खूब पटरे पर छेत-छेत कर साफ़ करता, कुछ पैसे तो ज़रूर साथ होंगे। बुड्ढ़े को झांसा देकर कुछ इधर-उधर से खा लेता, मगर बुड्ढ़े के सामने अपने फ़क्र व फ़ाक़ा और ज़ोहद का ज़ोर दिखाता। चार-पांच महीने बाद बुड्ढ़े ने कहा, अरे लौंडे! मुझे कीमिया आवे। बादशाह ने भी मुझसे पूछा था। मैं ने (सख़्त गाली देकर) उसको भी इंकार कर आया, तुझे ज़रूर बताऊंगा। बादशाह की जान में जान तो आ गई, मगर ज़ुबान से इतनी सख़्ती से इंकार किया की ऐसी तैसी, मुझे क्या करना है, मुझे तो तुम्हारी मुहब्बत ने मार रखा है। आठ दस दिन सक़्क़ा इसरार करता रहा, बादशाह इंकार करता रहा।

एक दिन बुड्ढ़े ने कहा, 'मैं बुड्ढ़ा हो गया, यह इल्म तो मेरे साथ ही चला जाएगा, किसी और को तो मैं बताने का नहीं, तुझे ज़रूर बताऊंगा। भाई, मुहब्बत से मुहब्बत होती है, मुझे भी तुझसे मुहब्बत हो गई। अगरचे तूने मुझे अपना हाल तो बताया नहीं कि कौन है, कहां से आया?

अजी, क्या अपना हाल बताऊं, लावारिस हूं, यों ही मारा-मारा फिरता हूं। घर भी भूल-भाल गया, कहां था, अब तो तुम ही अपना बेटा बना लो। (ग़रज़ में तो आदमी गधे को भी बाप बना लेता है,

यह तो बहरहाल आदमी था।)

एक दिन सुबह ही सुबह बादशाह सक़्क़े को साथ लेकर जंगल गया और पचीस-तीस बूटियां उसको ख़ूब दिखाईं और उसी से तोड़वाईं और घर आकर उसी से कीमिया बनवाई। बादशाह तो उस पर मर ही रह था, ख़ूब ग़ौर से देखा और रात ही को भाग गया। अगले दिन सक़्क़ा हाथ मलता रहा गया कि कमबख़्त बहुत ही धोखेबाज़ था। बेईमान यों कहे था कि मुझे तुझसे मुहब्बत है। अनजान आदमी को तो कभी मुंह न लगाए।

बादशाह ने अपने तख़्त पर पहुंच कर उन्हीं सन्तरियों को सक़्क़े के पास भेजा, वे पकड़ कर लाए। बादशाह ने पूछा, अरे सक़्क़े! तुझे कीमिया आती है?

सक़्क़े ने कहा, 'अजी मियां! आपने तो पहले भी पूछा था। अगर मुझे कीमिया आती तो मैं यों मारा-मारा फिरता?' मगर पांच-छः महीने जिसने पांव दबाए हों, वह कहां छुप सके था, सक़्क़ा उसके मुंह को घूरता रहा।

बादशाह ने कहा, मुझे भी पहचान लिया?

सक़्क़े ने कहा, मियां! ख़ूब पहचान लिया।

बादशाह ने कहा, फिर तू यह क्या कह रहा है?

सक़्क़े ने कहा, कीमिया तो पांव दबाने से आती है, बादशाह बनकर नहीं आती मियां! कीमिया के वास्ते तो सक़्क़ा बनना ज़रूरी है।

सुना कि बादशाह बहुत ही ख़ुश हुआ और उसे बहुत ही इनाम दिया।

अगला शेर भी मेरा सुना हुआ नहीं, मेरी ही तरफ़ से इज़ाफ़ा है—

तमन्ना दर्दे दिल की है तो कर ख़िदमत फ़क़ीरों की,
नहीं मिलता यह गौहर बादशाहों के ख़ज़ीनों में।
सुर्ख़रू होता है इंसां ठोकरें खाने के बाद,
रंग लाती है हिना पत्थर से घिस जाने के बाद।

सक़्क़े ने बात तो बहुत ही सही और पते की कही है। ख़ाकसारी, तवाज़ो और ख़ुशामद से जो मिलता है, वह बुराई और तकब्बुर से नहीं मिलता। इस क़िस्म के क़िस्से तो अपने बड़ों से बहुत सुन रखे हैं, मगर सारे रिसाले में नमूने ही लिखवाए हैं—

मपिन्दार जाने पिदर गर किसी
कि बेसई हरगिज़ बजाए रसी।

मेरे वालिद साहब रहमुतल्लाहि अलैहि, मेहनत, जफ़ाकारी, पस्ती के बड़े क़िस्से सुनाया करते थे। अल्लाह तआला उन्हें बहुत जज़ाए ख़ैर अता फ़रमाए। हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का पाक इर्शाद है—'मन तवाज़-अ लिल्लाहि र-फ़-अहुल्लाहु' (जो अल्लाह के लिए तवाज़ो करे, अल्लाह उसको बुलन्द दर्जा अता फ़रमाते हैं।) यहां तो तवाज़ो भी अल्लाह के लिए नहीं थी, ग़रज़ के वास्ते थी, मगर तवाज़ो और सक़्क़ा के पांव दबाने ने कीमिया सिखा दी। इस मुनासबत से सुलूक की मशहूर किताब 'इर्शादुल मुलूक', तर्जुमा 'इम्दादुस्सुलूक' से एक फ़स्ल (अध्याय) नक़ल करता हूं—

फ़स्ल नं. 12, पृ० 113—'ज़ान ले कि ज़ाते नफ़्स की सैर उस वक़्त हासिल होती है, जबकि सालिक का नफ़्से मुतमइन्ना शमा की तरह नूरानी बन जाए और उस वक़्त उसकी शुआ आलमे रूहानी में होती है और सैरे नफ़्स का समरा यह है कि नफ़्स बुज़ुर्ग और बा-अज़्मत हो जाए और उसकी बुज़ुर्गी और अज़्मत सैर की मिक़्दार पर होती है और सुन लेना चाहिए कि नफ़्स की सैर मुराक़बा और

हुज़ूर और अल्लाह तआला की जनाब में तज़ल्लुल व तवाज़ो और उबूदियत और तस्लीम और इंक़ियाद पर मौक़ूफ़ है और इस बारे में बहुतेरी हदीसें वारिद हैं। बस यों समझिए कि शाफ़े रोज़े मह्शर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया है कि जो आदमी अल्लाह तआला के लिए तवाज़ोअ़ करता है, अल्लाह तआला उसका मर्तबा बुलन्द फ़रमा देते हैं और वारिद है कि अल्लाह तआला ने मूसा अलैहिस्सलाम से फ़रमाया कि ऐ मूसा! जानते भी हो कि किस चीज़ की वजह से हमने तुमको मख़्लूक़ से आला और कलीम बनाया? उन्होंने अर्ज़ किया, ऐ रब! मैं तो नहीं जानता। हुक्म हुआ, हमने तुमको देखा था कि हमारी आली बारगाह में तवाज़ोअ के साथ ख़ाक पर पड़े हुए थे, पस इस वजह से हमने तुमको सारे आदमियों से बालातर बना दिया। और हज़रत सिद्दीक़े अक्बर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि फख्रुल अंबिया सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि किसी मुसलमान को हक़ीर न समझो कि मामूली मुसलमान भी ख़ुदा के नज़दीक बड़ा है और इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से रिवायत की है कि बनी आदम में कोई ऐसा नहीं है जिसके सर में दो ज़ंजीरें न हों। एक ज़ंजीर तो सातवें आसमान में है और दूसरी ज़मीन में खिंची हुई है। पस अगर इब्ने आदम तवाज़ोअ और ख़ाकसारी करता है, तो अल्लाह तआला आसमानी ज़ंजीर के ज़रिए से उसको सातवें आसमान से ऊपर ले जाता है और अगर तकब्बुर व गुरूर करता है तो ज़मीन वाली ज़ंजीर के वास्ते से सातवें आसमान के नीचे पहुंचा देता है और हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु ने आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से रिवायत किया है कि अल्लाह तआला फ़रमाता है कि जिस आदमी ने हमारे लिए तवाज़ो की और मख़्लूक़ के साथ नर्मी

और एहसान के साथ गुज़ारी और मेरी ज़मीन पर रहकर तकब्बुर नहीं किया, तो मैं उसका रुत्बा बुलंद करता हूं, यहां तक कि आला इल्लीयीन पर ले जाता हूं। ख़ुलासा यह है कि नफ़्स की सैर, जिसकी वजह से इंसान का नफ़्स नूरानी हो जाता है और बुलन्द रुत्बे नसीब होते हैं वे सब तकब्बुर को छोड़ने और अल्लाह की जनाब में ज़िल्लत व तवाज़ोअ़ करने में है।'

मक्तूब (ख़त) हज़रत मुजद्दिद साहब क़द्दसल्लाहु सिर्रहू न. 25

मेरे मख़्दूम व मुकर्रम! इंसानी नफ़्से अम्मारा हुब्बे जाह व रियासत पर पैदा किया गया है और मक़्सूद हमातन हमसरों पर बुलन्दी हासिल करना है और वह बिज़्ज़ात इस बात का ख़्वाहां है कि तमाम मख़्लूक़ उसकी मुहताज और उसके अम्र (हुक्म देना) व नह्य (मना करना) के ताबे हो जाए और वह ख़ुद किसी का मुहताज व महकूम न हो। उसका यह दावा बे-मिस्ल ख़ुदा के साथ उलूहियत और शिर्कत का दावा है, बल्कि वह बे-सआदत शिर्कत पर भी राज़ी नहीं है, चाहता है कि हाकिम सिर्फ़ आप ही हो, और सब उसके महकूम हों। हदीसे क़ुदसी में आया है—

"عاد نفسك فانها انتبتت بما دانى"

यानी अपने नफ़्स को दुश्मन रख, क्योंकि वह मेरी दुश्मनी पर खड़ा है, पस जाह व रियासत, और बुलन्दी व तकब्बुर वग़ैरह उसकी मुरादों को हासिल करने में नफ़्स की तर्बियत करना हक़ीक़त में उसको अल्लाह तआला की दुश्मनी में मदद और तक़्वियत देना है और इस मामले की बुराई अच्छी तरह मालूम करनी चाहिए। हदीसे

क़ुदसी में वारिद है कि–

"الكبرياء ردائى والعظمة ازارى فمن نازعنى فى شيئ منها
ادخلته فى النار ولا ابالى"

'तकब्बुर मेरी चादर और अज़्मत मेरा कपड़ा, पस जिसने इन दोनों में से किसी में मेरे साथ झगड़ा किया, मैं उसको दोज़ख़ में दाख़िल कर दूंगा और मुझे कोई परवा नहीं। कमीनी दुनिया, जो अल्लाह तआला की मलऊन व मबग़ूज़ है, इस वजह से है कि दुनिया का हासिल होना नफ़्स की मुराद के हासिल होने में मदद देता है। पस जो कोई दुश्मन की मदद करे, वह लानत ही के लायक़ और फ़क्रे फ़ख्रे मुहम्मदी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम है, क्योंकि फ़क्र में नफ़्स की नामुरादी और आजिज़ी है। नबियों के पैदा होने से मक़्सूद और शरई तक्लीफ़ों (शरीअत) की हिक्मत यही है कि नफ़्से अम्मारा आजिज़ और ख़राब हो जाए। शरई अह्काम नफ़्सानी ख़्वाहिशों के दफ़ा करने के लिए वारिद हुए हैं, जिस क़दर शरीअत के मुवाफ़िक़ अमल किया जाए, उसी क़दर नफ़्सानी ख़्वाहिश कम होती है। यही वजह है कि अह्कामे शरई में से एक हुक्म का बजा लाना नफ़्सानी ख़्वाहिशों के दूर करने में उन हज़ार साला रियाज़तों और मुजाहदों से जो अपने पास से किए जाएं, कई दर्जा बेहतर है, बल्कि ऐसी रियाज़तों और मुजाहदों को जो शरीअत के मुवाफ़िक़ न किए जाएं, नफ़्सानी ख़्वाहिशों को मदद और क़ूवत देने वाले हैं। ब्राह्मणों और जोगियों ने रियाज़तों और मुजाहदों में कभी नहीं की, लेकिन इनमें से कोई फ़ायदेमन्द न हुआ और उनसे नफ़्स की तक़्वियत और तर्बियत के सिवा कुछ हासिल न हुआ, जैसे, ज़कात के तौर पर जिसका शरीअत ने हुक्म दिया है, एक दाम ख़र्च करना नफ़्स के ख़राब करने

में उन हज़ार दीनारों के ख़र्च करने से बेहतर और फ़ायदेमंद है जो अपनी मर्ज़ी के मुवाफ़िक़ ख़र्च किए जाएं और शरीअत के हुक्म से ईदुल फ़ित्र के दिन खाना खाना ख़्वाहिश के दूर करने में अपनी मर्ज़ी के मुवाफ़िक़ कई साल रोज़ा रखने से बेहतर है और सुबह की नमाज़ की दो रकूअतों को जमाअत के साथ अदा करना, जो सुन्नतों में से एक सुन्नत है, कई दर्जा इस बात से बेहतर है कि तमाम रात नफ़्ल नमाज़ में क़ियाम करें और सुबह की नमाज़ बे-जमाअत अदा करें।

तकब्बुर के दर्जे और मरतबे

एक दर्जा तो यह है कि माल-औलाद, अक़्ल व हुस्न वग़ैरह में ख़ुद को औरों से बड़ा और दूसरों को हक़ीर व ज़लील समझे। इन चीज़ों में तकब्बुर बहुत बड़ी हिमाक़त हैं, इसलिए कि इन सब चीज़ों के हक़ीक़ी मालिक तो अल्लाह तआला हैं और बन्दे को सिर्फ़ आरज़ी तौर पर इम्तिहान के लिए अता हुई हैं, जब वे चाहेंगे, फ़ौरन छीन लेंगे, वरना कुछ दिन बाद तो मौत यक़ीनन उन चीज़ों को छुड़ा ही देगी, फिर तकब्बुर की गुंजाइश कहां है।

इंसान यह महसूस करता है कि गो आरज़ी तौर पर हैं, लेकिन फिर भी तकब्बुर की ये वजहें नज़र तो आ रही हैं और ये हज़रात सिर्फ़ इन्हीं चीज़ों में दूसरों से फ़ौक़ियत ले जाने को काफ़ी व वाफ़ी तसव्वुर करते हैं, हालांकि दुनियादारों में से अक्सर लोग इल्म व अमल की दौलत में ख़ुद को औरों से कम ही जानते हैं। इसलिए हर क़िस्म की बड़ाई का ख़्याल कम दर्जे का तकब्बुर है और इसीलिए बूढ़े ज़ानी और फ़क़ीर मुतकब्बिर पर अल्लाह तआला का ज़्यादा गुस्सा वारिद हुआ है, क्योंकि इसके पास तो झूठे अस्बाब भी नहीं

और इस पर तकब्बुर करते हैं और सबसे बड़ा तकब्बुर यह है कि वली और बुज़ुर्ग बनने की इस बुनियाद पर झूठी कोशिश करे कि अल्लाह तआला के साथ ताल्लुक़ और तक़र्रुब में जो इज़्ज़त और बड़ाई है, इसको दुनिया के बड़े-बड़े बादशाह भी मानते हैं और इन फ़क़ीरों की जूतियां उठाने को फ़ख़्र तसव्वुर करते हैं, इसलिए इल्म व अमल पर जो तकब्बुर होगा, वह भी सबसे बड़ा होगा। इसमें हिमाक़त की भी इंतिहा हो जाती है, इसलिए माल व औलाद वग़ैरह जो दुनियादारों की बड़ाई के अस्बाब हैं, वे कुल मिलाकर देखने में तो आते हैं, क्योंकि अमल के क़ुबूल व अदमे क़ुबूल की तो किसी को ख़बर भी नहीं है, यह तो सिर्फ़ अल्लाह तआला की मर्ज़ी और फ़ज़्ल पर है। कोई बड़े से बड़ा बुज़ुर्ग भी अपने अमल को अल्लाह की शान के मुताबिक़ क़ुबूल करने के क़ाबिल नहीं कह सकता, साथ ही क़ुबूलियत की किसी के पास इत्तिलभी नहीं, बल्कि जितनी किसी के पास मारफ़त होगी, उतना ही वह अपने अमल को हक़ीर समझेगा और डरेगा, अगर कभी किसी शुक्रिया के बतौर किसी के दीनी नफ़ा के लिए अपने किसी अमल या हालत को ज़ाहिर करेगा, तो उसके साथ इज्ज़ व तवाज़ो का इज़्हार होगा, तकब्बुर न होगा और एक तकब्बुर इससे भी बढ़कर है, वह तवाज़ो की शक्ल में है, यानी इंसान ख़ुद को तो तवाज़ो की सिफ़त से मौसूफ़ और उसमें औरों से बढ़ा हुआ समझे, उसको अपने मुतकब्बिर होने का वह्म तक नहीं होता। इसलिए यह सिर्फ़ तकब्बुर से ज़्यादा शदीद है।

हकीमुल उम्मत हज़रत मौलाना थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं कि एक साहब के ख़त में इस मिसरे (पद) ने मुझे सर से पांव तक हिला दिया—

ओ बिनाज़े अजबे मन बिनियाज़े अजबे।

फिर तकब्बुर कभी दिल में होता है, यह इस्तिक्बार कहलाता है, कभी ज़ुबान से भी ज़ाहिर होता है, इसको फ़ुख़ूर और शेख़ी बघारने वाला कहते हैं। ये सब हराम हैं, चुनांचे इशदि रब्बानी है—

أَبٰى وَاسْتَكْبَرَ وَكَانَ مِنَ الْكٰفِرِيْنَ○

وَاللّٰهُ لَا يُحِبُّ كُلَّ مُخْتَارٍ فَخُوْرٍ○

'अबा वस्तक-ब-र व का-न मिनल काफ़िरीन'०

'वल्लाहु ला युहिब्बु कुल-ल मुख़्तारिन फ़ख़ूर०'

दूसरा हिस्सा

तकब्बुर की निशानियां

तकब्बुर की एक निहायत बदतरीन ख़ुसूसियत

तकब्बुर अपने मानी और मतलब के लिहाज़ से तो बिल्कुल साफ़ है, यानी ख़ुद को औरों से ऊंचा समझना और दूसरों को हक़ीर (नीचा) जानना, लेकिन जुनून की बीमारी की तरह इसकी भी एक अजीब ख़ासियत है और वह यह है कि जुनून वाला जिस तरह ख़ुद को मरीज़ नहीं जानता, बल्कि दूसरों ही को मजनून समझता है, उसी तरह दुनिया में कोई मुतकब्बिर ख़ुद को मुतकब्बिर नहीं समझता, बल्कि जितना किसी के अन्दर यह मरज़ होता है, उतना ही वह अपने से इसकी नफ़ी करता है और बेफ़िक्र होता है। मजनून तो अक़्ल के ज़ायल होने की वजह से माज़ूर होता है, लेकिन मुतकब्बिर माज़ूर नहीं, क्योंकि यहां मरज़ का एहसास न होने की वजह अक़्ल का फ़ुतूर नहीं है, बल्कि बे-फ़िक्री और बे-इल्तिफ़ाती है जो माफ़ नहीं है और यही हाल मौत का भी है कि एतक़ाद व यक़ीन के बावजूद मौत से ऐसी ग़फ़लत और बे-फ़िक्री है कि हालात से मालूम होता है कि मौत महज़ अफ़साना है या दूसरों को आया करती है, हमें तो कभी भी न आएगी या कम से कम फिलहाल और फ़ौरन तो आ ही नहीं सकती, वर्षों के बाद जब कभी आएगी, उस वक़्त देख लेंगे, अभी से फ़िक्र में पड़ने की क्या ज़रूरत है, हालांकि हक़ीक़त इसके ख़िलाफ़ है। मौत हर वक़्त सर पर सवार है। इसकी फ़िक्र हर वक़्त रहनी

चाहिए। मौत को याद न करना ही दिल की सख़्ती, तूले अमल और सारी ग़फ़लतों की जड़ है। इसी तरह तकब्बुर भी बिल्कुल ज़ाहिर है कि यह अपने मानी और तारीफ़ के हिसाब से बिल्कुल वाज़ेह है, यानी ख़ुद को औरों से ऊंचा समझना और दूसरों को हक़ीर जानना, लेकिन इंसान को इसका एहसास क़तई तौर पर नहीं होता, जिसकी वजह बे-फ़िक्री और अपनी हालत पर तवज्जोह न करना है और इल्तिफ़ात की ज़रूरत इसलिए नहीं होती कि तकब्बुर की हक़ीक़त ही यह है कि आदमी अपने तमाम अफ़आल व आमाल व अफ़कार व ख़्यालात को अच्छा समझे। जब अच्छा ही समझ रहा है तो फ़िक्र की क्या ज़रूरत, जब तक कि अलामतों पर ग़ौर न करे या कोई दूसरा दोस्त मुतनब्बह न करे, पता नहीं चलता, क्योंकि दूसरों पर तो यह ख़स्लत अक्सर बहुत जल्द ही ज़ाहिर हो जाती है, जैसा कि कोई गुस्से में जब यह कहता है कि तू जानता नहीं कि मैं कौन हूं। इन लफ़्ज़ों से किब्र बिल्कुल ज़ाहिर है। इसी तरह आवाज़ के अन्दर भी महसूस हो जाता है, बल्कि चाल-ढाल, चेहरे के ख़त व ख़ाल और हरकात व सकनात से तकब्बुर साफ़ टपक पड़ता है, जिससे वह आदमी समझदार इंसान की नज़रों में तो गिर ही जाता है, अलबत्ता बेवक़ूफ़ों पर वक़्ती तौर पर थोड़ा-सा रौब पड़ जाता है, लेकिन इसका उनके दिल पर कुछ असर नहीं होता। तवाज़ो वालों का जो रौब और वक़ार होता है, उसका दिल पर असर पड़ता है। मुहब्बत व कशिश के साथ अज़्मत व हैबत होती है, इसलिए हम सबको चाहिए कि अपने को मरीज़ समझ कर किब्र की अलामतों को ग़ौर से पढ़कर इलाज का फ़िक्र करें। अब कुछ अलामतें लिखकर फिर इलाज अर्ज़ किया जाएगा, इनशाअल्लाह!

हज़रत मौलाना मियां सैयद असग़र हुसैन साहब मुहद्दिस

रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं–

1. किब्र और ख़ुदपसन्दी एक क़ल्बी मामला है, जिसका असर यह है कि आदमी को अपनी राय या एतक़ाद के मुक़ाबले में हक़ बात कुबूल करने से नफ़रत होती है।

2. दूसरों के एतक़ाद व ख़्याल, राय व क़ियास, सूरत व लिबास को हक़ीर समझने लगता है।

3. शरई ज़रूरत के बग़ैर दूसरों की बुराई या ऐब व नक़्स की बात बयान करता है या रग़बत से सुनता है। कभी ज़ाहिर में कह भी देता है कि ग़ीबत न करो, मुझको अच्छी नहीं लगती, लेकिन अन्दर से दिल यही चाहता है कि मेरी बात न माने, बल्कि अपनी बात सुनाए जाए।

4. तवाज़ो का कोई काम करके यह ख़्याल करना कि मैंने तवाज़ो अख़्तियार की है, यह भी तकब्बुर की अलामत है, क्योंकि तवाज़ो करने वाले को तो अपनी तवाज़ो की तरफ़ तवज्जोह भी नहीं होती, यानी यह सोचना कि मैं तो बड़ा आदमी हूं, यह काम मैंने तवाज़ो अख़्तियार करने की वजह से अपनी हैसियत से कम दर्जे का किया है, यही तो किब्र हुआ। अगर अन्दर बड़ाई का तसव्वुर न होता तो वह काम तवाज़ो का मालूम न होता, जैसे कोई ग़रीब व फ़क़ीर आदमी ज़मीन पर बैठे तो उसको कोई तवाज़ो वाला नहीं कहेगा, न वह अपने को तवाज़ो वाला कह सकता है, लेकिन अगर कोई अमीर आदमी ज़मीन पर बैठने को तवाज़ो का काम समझता है तो ज़ाहिर है कि अपनी बड़ाई को सामने रखकर समझता है और यही किब्र है।

5. अपनी शोहरत के अस्बाब अख़्तियार करने वाला और गुमनामी से बचने वाला हर वक़्त उर्फ़ी वक़ार की फ़िक्र रखने वाला आदमी भी मुतकब्बिर है। अपनी इस्लाह के वास्ते एक मुतफ़क्किर

के लिए अपने अन्दर इस अलामत को महसूस करना मुश्किल नहीं।

6. अपने साथ इम्तियाज़ी मामला चाहने वाला, यानी बातचीत करने में, बिठाने-उठाने में और दूसरे लेन-देन के मामलों में अगर उसकी हैसियत के मुताबिक़ कोई मामला नहीं करता तो उसका दिल तंग होता है। ज़ाहिर है कि दिल की तंगी की वजह अपनी हैसियत पर नज़र ही है और यह तकब्बुर ही है।

7. सबसे बड़ा मुतकब्बिर और फ़क़ीरी के रास्ते का नाकाम, बल्कि इस रास्ते का उलटा चलने वाला वह सूफ़ी है जो अपने मुताल्लिक़ मशाइख़ से ख़िलाफ़त व इजाज़त की ख़्वाहिश और उम्मीद रखता हो।

8. अपने तक़्वा और दीनदारी की मज्मूई हालत के लिहाज़ से ग़ैर-मुतवाज़िन तौर पर छोटी-छोटी जुज़ई बातों में पाक, नापाक, हलाल, हराम का बहुत शोर करना, इसी तरह फ़रज़ों की ग़फ़लत के बावजूद मुस्तहिब्बात पर ज़ोर-शोर दिखलाना।

चुनांचे 'इकमाल' में लिखा है कि 'वाजिबात की अदाएगी में सुस्ती और नफ़्सी इबादत में तेज़ी दिखाना नफ़्स की पैरवी की अलामत है। इसी तरह कोई दूसरा उनके मुसल्ले पर पैर रख दे या लोटा इस्तेमाल कर ले तो वह बस नापाक हो जाता है। सिर्फ़ शुबहे पर किसी का खाना हराम और उसके पीछे नमाज़ नाजायज़ हो जाती है। इस क़िस्म की अलामतें ख़ुसूसियत के साथ उन क़ारी हज़रात में भी पाई जाती हैं जो फ़न में तो महारत हासिल कर लेते हैं, लेकिन किसी बुज़ुर्ग से अपनी इस्लाह नहीं करवाते।

हज़रत इमाम ग़ज़ाली का मज़्मून 'कुछ क़ारियों के हालात'

इसके मुताल्लिक़ हज़रत हुज्जतुल इस्लाम इमाम ग़ज़ाली रहमतुल्लाहि अलैहि अल-मुतवफ़्फ़ा (मृत्यु) 505 हि० की आख़िरी किताब 'मिनहाजुल आबिदीन' में जो क़ारियों का हाल लिखा है वह ज़रा सख़्त मज़्मून है, इसलिए एक-एक लफ़्ज़ उन्हीं की किताब से नक़ल करता हूं, ताकि उनके ख़ुलूस की बरकत की वजह से सख़्ती से बुरा असर न हो। वह लिखते हैं—

'हसद, किब्र वग़ैरह ये ऐब आम इंसानों में आम तौर पर, क़ारियों में ख़ास तौर पर पाए जाते हैं। नतीजा यह होता है कि ये ऐब बहुत बड़ी और बदतरीन शक्ल अख़्तियार कर लेते हैं। जिस क़ारी को भी ग़ौर से देखेंगे, उसका हाल यही नज़र आएगा कि उम्मीदें लम्बी होंगी और उसको भी भली नीयत समझेंगे। इसलिए ख़ैर (भलाई) के मरतबे हासिल करने में, साथ ही दुआ के क़ुबूल होने में जल्दी मचाएगा और नतीजा यह होगा कि उससे महरूम रह जाएगा। तुम ऐसे क़ारियों को देखोगे कि वे अपने हम पल्ला क़ारियों से इन चीज़ों पर हसद करते हुए नज़र आएंगे जिनसे हक़ तआला शानुहू ने उनको नवाज़ा है, यहां तक कि ऐसी जगह पहुंच जाएंगे और अपने को ऐसी बुराइयों और रुसवाइयों में डाल देंगे, जिनकी जानिब कोई फ़ासिक़ व फ़ाजिर भी रुख़ नहीं कर सकता।'

हज़रत अता रहमतुल्लाहि अलैहि बयान करते हैं कि मुझसे सुफ़ियान सौरी ने फ़रमाया कि क़ारियों से बचो और मुझे उनसे बचाओ, इसलिए कि मैं अगर उनकी मुख़ालफ़त करूं तो एक अनार के बारे

में मुझसे झगड़ा शुरू कर देंगे। मैं कहूंगा, यह मीठा है, वे कहेंगे, यह खट्टा है, यहां तक कि मुझको तो इस बात का भी अन्देशा है कि वे मुझे ज़ालिम बादशाह के पास ले जाकर उसके सुपुर्द कर देंगे।'

मालिक बिन दीनार रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं कि 'मैं क़ारियों की गवाही तमाम मख़्लूक़ के ख़िलाफ़ क़ुबूल कर लेता हूं, लेकिन इनमें से कुछ की गवाही कुछ के ख़िलाफ़ क़तई तौर पर क़ुबूल नहीं करता, इसलिए कि मैंने अक्सर क़ारियों को हसद करने वाला पाया है।

हज़रत फ़ुज़ैल रह० से रिवायत है कि उन्होंने अपने लड़के से फ़रमाया कि क़ारियों से दूर जाकर मकान ख़रीद लो, इसलिए कि अगर मुझसे और जमाअत से कोई लग़्ज़िश हो गई तो ये सारी तज़लील करेंगे। अगर अल्लाह तआला ने कोई नेमत अता फ़रमाई तो ये हसद करेंगे, ग़रज़ क़ारियों को तू इस तरह देखेगा कि इंसानों पर तकब्बुर करते होंगे, गाल फुलाए हुए और चेहरे बिगाड़े हुए होंगे।

(इन्तिहा कलामुल इमाम)

इस रिसाले के और मज़्मूनों की तरह क़ारियों के ज़िक्र वाला मज़्मून भी सिर्फ़ दीनी ख़ैरख़्वाही की बुनियाद पर लिखा गया है, ताकि तमाम क़ारियों के लिए आम तौर से और उनमें से सिलसिले में दाख़िल होने वाले लोगों के लिए ख़ास तौर से फ़ायदेमंद हो और उन तमाम ऐबों से अपने ज़ाहिर व बातिल को बिल्कुल पाक-साफ़ बनाने की कोशिश करें और दिल से दुआ करें कि अल्लाह तआला हमें अपने मक़्बूल बन्दों वाली ख़ूबियां इनायत करें और अपने पसन्दीदा तरीक़े पर क़ुरआन शरीफ़ के पढ़ने और पढ़ाने की तौफ़ीक़ दें और हमें और हमारे शागिर्दों को इस हदीस का मिस्दाक़ बनाएं—

حامِل القرآن حامل لواء الاسلام من اكرمه فقد اكرمه الله

ومن اهانه فعليه لعنة الله۔ (مسند فردوس)

'साहिबे कुरआन इस्लाम का झंडा लिए हुए है, जो उसकी ताज़ीम करेगा, अल्लाह उसको इज़्ज़त देगा और जो उसकी तौहीन करेगा, उस पर अल्लाह तआला की लानत होगी।'

क़ारी हज़रात का मक़ाम

क़ारियों में इस मरज़ के ज़्यादा पाए जाने की वजह उनकी जलालते शान, उनके काम की अज़्मत व बुज़ुर्गी है। जिस जगह बड़ाई के अस्बाब होते हैं, वहां इस मरज़ का अंदेशा भी होता है, क्योंकि जो बुलन्द मक़ाम पर फ़ाइज़ हो, उसके गिरने से नुक़्सान भी ज़्यादा होता है, जिस घर में माल होता है, उसमें चोरों का अन्देशा भी होता है, जिसमें जितना हुस्न होता है, उसके लिए अस्मत की हिफ़ाज़त भी उतनी ही ज़रूरी होती है। इबादत की ज़्यादती के साथ दिखावे का अन्देशा भी लगा हुआ होता है और सख़ावत की ज़्यादती के साथ हुब्बे जाह का ख़तरा भी लाबुदी और ज़रूरी है और इसीलिए रियाकार क़ारी, सख़ी शहीद के बारे में आया है कि उनके लिए हुक्म होगा और उनको मुंह के बल घसीट कर जहन्नम में डाल दिया जाएगा।

ज़ाहिर है कि इस हदीस में उन तीनों जमाअतों की तौहीन व तज़लील नहीं है, बल्कि मक़्सद यह है कि अपने आमाल को दिखावे से पाक रखने का पूरा एहतमाम करें। इसी तरह नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की पाक बीवियों के बारे में सूरः अहज़ाब आयत 30 में इर्शाद है—

يٰنِسَآءَ النَّبِيِّ مَنْ يَّاْتِ مِنْكُنَّ بِفَاحِشَةٍ مُّبَيِّنَةٍ يُّضٰعَفْ لَهَا

'ऐ नबी की बीवियों! तुममें से जो भी खुली नाफ़रमानी करेगी और नबी सल्ल० से ज़्यादा नफ़क़ा और

اَلْعَذَابُ ضِعْفَيْنِ ط (سورۂ احزاب: ۳۰)

ख़र्च तलब करके सताएगी, अल्लाह तआला उसको औरों से दोगुनी सज़ा देंगे।' —सूरः अह्ज़ाब, आयत 30

साथ ही इर्शाद है—

"افمن يعلم انما انزل اليك من ربك الحق كمن هو اعمٰى"

'क्या जो आदमी यह यक़ीन रखता है कि जो क़ुरआन पाक आपके रब के यहां से उतरा है, वह बिल्कुल हक़ और सही है, क्या इस मुबारक सिफ़त वाला उसकी तरह हो सकता है जो बिल्कुल अंधा हो और क़ुरआन की तरफ़ तवज्जोह भी न करता हो?'

साथ ही हदीस में है कि जहन्नम में एक घाटी है जिससे जहन्नम हर दिन सात बार पनाह मांगती है और वादी में एक कुंवां है जिससे वह वादी और जहन्नम सात बार रोज़ाना पनाह मांगते हैं और उस कुएं में एक सांप है, जिससे दोज़ख़, वादी और कुंवां तीनों चीज़ें हर दिन सात बार पनाह चाहती हैं। क़ुरआन वाले फ़ासिक़ों और बद-अमलों को उसमें औरों से पहले डाला जाएगा। वे अर्ज़ करेंगे, ऐ अल्लाह! बुतपरस्तों से भी पहले हमें इस अज़ाब में डाल दिया। इर्शाद होगा—

"ليس من يعلم كمن لا يعلم"

'जानने वाला, न जानने वाले के बराबर नहीं हुआ करता।' (तुमने यह सब कुछ जान-बूझ कर किया है।) साथ ही अगर शादीशुदा आज़ाद मर्द व औरत ज़िना में मुब्तला हो जाएं तो हदीस

के मुताबिक़ उनकी सज़ा संगसारी (पत्थर मार-मार कर हलाक करना) और ग़ैर-शादीशुदा मर्द आज़ाद की सज़ा सिर्फ़ सौ कोड़े हैं और ग़ुलाम और बांदी की सज़ा पचास कोड़े हैं। ज़ाहिर है कि इससे ग़ुलाम और बांदी की आज़ादी पर फ़ौक़ियत साबित नहीं होती, साथ ही यह बात भी वाज़ेह है कि मस्जिद में गन्दगी और बदबू डालना ज़्यादा बुरा है और बाज़ार में डालना उतना बुरा नहीं और गन्दगी की जगह डालने को कोई बुरा नहीं समझता। पस दीनी बुज़ुर्गों के इर्शाद में क़ारियों के लिए ख़ुसूसी और ज़्यादा तंबीह उनके कामिल होने की वजह से है और नीचे लिखी गई हदीस भी उनकी फ़ज़ीलत पर वाज़ेह दलील है और वह यह है—

خَيْرُكُمْ مَنْ تَعَلَّمَ الْقُرْاٰنَ وَعَلَّمَهٗ۔

'तुममें सबसे बेहतर वे हैं जो क़ुरआन मजीद पढ़ें और उसे पढ़ाएं।'

और इल्म वाले ख़ूब जानते हैं कि तज्वीद व क़िरात की किताबों में क़ुरआन मजीद और क़ारियों और हाफ़िज़ों की फ़ज़ीलत की रिवायतें कसरत से आई हैं और हज़रते अक़्दस शेख़ुल हदीस मौलाना मुहम्मद ज़करिया साहब दामत फ़ुयूज़ुहुम व मज्दुहुम का रिसाला 'फ़ज़ाइले क़ुरआन' भी इस सिलसिले की एक सबसे अच्छी कड़ी है। इस बारे में उसका पढ़ लेना भी ज़्यादा फ़ायदेमंद होगा। क़ुरआन मजीद की सबसे बड़ी फ़ज़ीलत यह है कि यह हक़ीक़ी महबूब का कलाम है और सच्चे माबूद व मत्लूब के फ़रमाए हुए अलफ़ाज़ हैं। इसके बाद किसी और फ़ज़ीलत की ज़रूरत क़तई तौर पर बाक़ी नहीं रहती। इसको बहुत अच्छे तरीक़े से और सेहत व तज्वीद के साथ और ख़ुश आवाज़ी से पढ़ना और उसी को अपना मश्ग़ला बना लेना

कितनी बड़ी क़द्र व मंज़िलत की बात है, चूंकि 'व रत्तिलिल क़ुरआ-न तर्तीला०' यानी अल्लाह तआला ने ख़ुद हुक्म फ़रमाया है कि क़ुरआन को साफ़-साफ़ और ठहर-ठहर कर पढ़ो, इसलिए क़ुरआन मजीद का तज्वीद से पढ़ना फ़र्ज़ है। इसके बग़ैर नमाज़ भी दुरुस्त नहीं होती और कुछ लोगों का इस फ़न में महारत हासिल करना और इस सिलसिले को जारी रखना फ़र्ज़ किफ़ाया है, लेकिन—

जिनके रुत्बे हैं सिवा उनको सिवा मुश्किल है।

इसलिए क़ारियों को अपने इस मर्तबे की हिफ़ाज़त पूरे एहतिमाम से करनी चाहिए और हर वक़्त लरज़ां व तरसां रहें और यह सोचें कि कोई ऐसी ग़लती न हो जाए, जिससे यह मर्तबा सल्ब हो जाए। आरिफ़े कामिल हज़रत मौलाना शाह अब्दुर्रहीम साहब क़द-द-स सिर्रहू रायपुरी फ़रमाते हैं कि हाफ़िज़ का सीना हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के उस मुबारक सीने से मिलता-जुलता है जिस पर क़ुरआन नाज़िल हुआ और उसी में महफ़ूज़ हुआ। इस वजह से हाफ़िज़ के लिए ज़रूरी है कि अपने दिल को तकब्बुर व दिखावा, शोहरत, लोभ-लालच वग़ैरह से पाक रखे, क्योंकि इसमें क़ुरआन लिखा हुआ है और महफ़ूज़ है और हदीस में क़ुरआन पढ़ने वाले मोमिन की मिसाल उतरुज से दी गई है, जो एक ख़ुश्बूदार फल का नाम है। शातबिया शेर (पद) न. 8 में है—

وَقَارِئُهُ الْمَرْضِىُّ قَرَّ مِثَالُهُ
كَالْأُتْرُجِّ حَالَيْهِ مُرِيْحًا وَّمُوْكِلَا

'व क़ारिउहुल मर्ज़ीयु क़र्रमिसालहू
कल उतररुज्जि हालीहि मरीहंव-व मूकिला'

यानी क़ुरआन मजीद का पढ़ने वाला अगर नेक आमाल करके

हक़ तआला का पसंदीदा बन जाए तो उसकी मिसाल हदीस पाक में उतरुज की तरह आई है कि उसकी ख़ुश्बू भी अच्छी है और मज़ा भी उम्दा है, यानी जिस तरह ख़ुश्बू वाले के पास बैठने से हमनशीनों का दिमाग़ मुअत्तर हो जाता है, उसी तरह क़ारी के पास बैठने वाले क़ुरआन मजीद सुनकर मालामाल हो जाते हैं और जिस तरह उतरुज का मज़ा उम्दा है, उसी तरह मोमिन का बातिन भी ईमान की वजह से नूरानी है और क़ुरआन मजीद पढ़ने वाले मुनाफ़िक़ की मिसाल रैहान की तरह है कि उसकी ख़ुश्बू तो अच्छी है, मगर मज़ा कड़ुवा होता है। इसमें इशारा है कि क़ारी को चाहिए कि अपने नफ़्स को बुरी आदतों (बुख़्ल, हसद, तकब्बुर, दिखावा, कीना वग़ैरह) से पाक करके अख़्लाक़े हमीदा (सब्र व शुक्र, रज़ा व तवक्कुल वग़ैरह) से सजाए और अपने ज़ाहिर व बातिन को नूरानी बनाए। ग़रज़ तान और मालामत उन क़ारियों और उलेमा और दीनी कारकुनों के लिए है जो सिर्फ़ इल्म और फ़न में महारत हासिल कर लेने को काफ़ी जानकर अपनी ज़ाहिरी व बातिनी इस्लाह व एहतमाम नहीं करते, साथ ही क़ारियों और आलिमों की इस्लाह के लिए क़ुरआन हर तरह काफ़ी व वाफ़ी है। चुनांचे सूरः यूनुस में इर्शाद है—

يٰٓاَيُّهَا النَّاسُ قَدْ جَآءَتْكُمْ مَّوْعِظَةٌ مِّنْ رَّبِّكُمْ وَشِفَآءٌ لِّمَا فِى الصُّدُوْرِ وَهُدًى وَّرَحْمَةٌ لِّلْمُؤْمِنِيْنَ (يونس:٥٧)

'ऐ लोगो! बेशक तुम्हारे पास तुम्हारे परवरदिगार के यहां से नसीहत और दिलों की बीमारियों की शिफ़ा और ईमान वालों के लिए हिदायत व रहमत आ गई है।'

—यूनुस, आयत 57

हदीस में है कि मौत को ज़्यादा से ज़्यादा याद करने और क़ुरआन पाक की तिलावत करने से दिल में सफ़ाई और पाकीज़गी

आ जाती है और दूसरी हदीस में है, जो हज़रत अबूज़र रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि तुम लोग अल्लाह तआला की तरफ़ रुजूअ़ और उनका कुर्ब और प्यार उससे ज़्यादा किसी और चीज़ से हासिल नहीं कर सकते जो ख़ुद अल्लाह तआला शानुहू की मुक़द्दस ज़ात से निकली है और वह कुरआन है, जिसमें शरीअत भी है और दिल की बीमारियों की शिफ़ा भी और अल्लाह तआला की तरफ़ वसूल का (मिलने का) और उनका प्यारा बन्दा बनने का रास्ता भी बताया है, लेकिन कुरआन मजीद को हाथ लगाने के लिए वुज़ू और गुस्ल के ज़रिए माफ़ी हासिल करने की और उसे सही पढ़ने के लिए तज्वीद के माहिर उस्ताद से सीखने की और उसके अह्काम पर अमल करने के लिए फ़िक़्ह व हदीस की और दूसरे बहुत से इल्मों की और बाइज़्ज़त इमामों की रहनुमाई बहुत ज़रूरी है, उसी तरह कुरआन पाक से अपनी इस्लाह करने के लिए भी दीनी बुज़ुर्गों से ताल्लुक़ पैदा करने की ज़रूरत है और ख़ुद क़ारियों और आलिमों की जमाअत में अल्लाह के फ़ज़्ल से ऐसे लोग मौजूद हैं जिनसे इस्लाही ताल्लुक़ पैदा करके गन्दे अख़्लाक़ से पाकीज़गी और अच्छे अख़्लाक़ से अपने ज़ाहिर व बातिन के सजा लेने की नेमत हासिल कर सकते हैं और इसके बाद उनकी दीनी ख़िदमत का वज़न भी लाखों गुना ज़्यादा हो जाएगा, क्योंकि आमाल का वज़न यक़ीनन ईमान की क़ूवत और एहसान की कैफ़ियत के मिक़्दार के अन्दाज़े पर होता है।

चुनांचे हदीस में है कि 'मेरे सहाबा का एक मुद्द (यानी जौ अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करना) बाद में आने वालों के उहुद पहाड़ के बराबर सोना ख़र्च करने से बढ़कर है।' यह फ़र्क़ इसलिए है कि सहाबा का इख़्लास बाद वालों के यक़ीन से बेशुमार दर्जा बढ़ा हुआ है, साथ ही शुयूख़ फ़रमाते हैं कि 'आरिफ़ की एक रकअत

ग़ैर-आरिफ़ की लाख रकूअतों से बढ़कर है। यह फ़र्क़ भी एहसान व इख़्लास के दर्जों के फ़र्क़ की बुनियाद पर है।

इजाज़त दी जाए तो एक और बात भी अर्ज़ करने को जी चाहता है, जिसका याद रखना क़ारियों के लिए बहुत ज़्यादा फ़ायदेमंद है कि हदीस में जो उम्दा आवाज़ों से तिलावत करने का शौक़ दिलाया है, इस ख़ुश आवाज़ी की तफ़्सील भी दूसरी हदीस में आई है। किसी ने आपसे पूछा कि उम्दा आवाज़ से पढ़ने वाला कौन है? फ़रमाया कि जब तुम उसे तिलावत करते देखो तो तुम्हें यह मालूम हो कि वह अल्लाह से डर रहा है।

बन्दे ने अपने बुज़ुर्गों को क़ुरआन पाक की तिलावत में ज़्यादा से ज़्यादा रोते हुए बार-बार देखा है। अल्लाह तआला हमें भी उनकी इस सिफ़त से और दूसरी तमाम सिफ़तों से नवाज़ा जाना नसीब फ़रमाए। आमीन या रब्बल आलमीन बजाहे सैयदिल मुर्सलीन०

अलामत 9. कुछ की चाल तो फ़ैशन में आकर ऐसी हो जाती है जैसे लक़ा कबूतर कि अपनी दुम संभाल-संभाल कर हरकत करता है, ऐसी ही चाल ये लोग चलते हैं। क़दम-क़दम पर देखते जाते हैं कि कहीं से फ़ैशन तो नहीं बिगड़ गया। ग़र्रे की नोक और शेरवानी की क्रीज़ का हर वक़्त ख्याल रहता है, नमाज़ में भी इसकी हर वक़्त फ़िक्र रहती है और बार-बार ठीक करके नमाज़ भी ख़राब कर लेते हैं।

तकब्बुर की कुछ शाख़ों का अपने अन्दर मालूम करना आसान है, जैसे ग़ुस्सा, हसद, बुग़्ज़, दिखावा, बदगुमानी वग़ैरह, कुछ अलामतें तंबीह और इलाज के बयान में आएंगी। ठीक यही हालत मौजूदा ज़माने के अक्सर का बेशतर ख़तीबों, आलिमों और मशाइख़ की है। इसी फ़ैशन के लिए लिबास व टख़नों के नीचे तक पहनना

और किसी नवजवान सालेह को सुन्नत के शौक़ में आधी पिंडुली तक पहुंचे देखे, तो मुस्करा देना, कई साहिबे इल्म को ऐसा मुस्कराते देखा। साहिबे इल्म हज़रात जानते हैं कि यह कितनी सख़्त बात हो सकती है। ज़ाहिरी गुनाह के लिहाज़ से दाढ़ी का मुंडाना एक मुश्त से कम के कटाने से ज़्यादा शदीद है, मगर यह किब्र का मरज़ अक्सर ख़शख़शी दाढ़ी वालों में निस्बतन ज़्यादा पाया जाता है और वे दाढ़ी को किसी वजह से रख तो लेते हैं, या किसी मजबूरी से मुंडा नहीं सकते, मगर हर वक़्त उसकी साज-सज्जा की फ़िक्र रहती है, ख़ास तौर से रास्ता चलते और नमाज़ में यह फ़िक्र बहुत सवार होती है कि कहीं एक छोटा-सा बाल इधर-उधर न हो जाए, बार-बार हाथ से उसको दबाया जाता है, भले ही नमाज़ में पचास बार यह हरकत करके नमाज़ को ख़राब करना पड़े।

10. नफ़्ल नमाज़ों में तेज़ी दिखाना और वाजिबों को पूरा करने में सुस्ती करना, जैसे—

1. सूफ़ियों में इस तरह कि ज़िक्र-मुराक़बे वग़ैरह में बहुत पाबन्दी करना, यहां तक कि रात को देर तक वज़ीफ़ों में मश्ग़ूल रहकर सुबह की नमाज़ के वक़्त सोते रहना या बग़ैर जमाअत के नमाज़ पढ़ लेना। अपने ज़िम्मे क़ज़ा नमाज़ों को अदा करने और पिछले सालों की ज़कात अदा करने में सुस्ती करना।

2. और उलेमा में इस तरह कि वाज़, तब्लीग़, तस्नीफ़ व तालीफ़ में नाम पैदा करने वाले आमाल में ख़ूब कोशिश करना और ख़ुद कोशिश करना और ख़ुद अपनी इस्लाह की फ़िक्र न करना।

3. और तलबा में नमाज़, रोज़ा, पाकी-नापाकी, ख़रीद व फ़रोख़्त के मसले, जिनको मालूम करना हर मुसलमान पर फ़र्ज़ है, इसकी तो परवाह न करना, न तो अरबी की बड़ी फ़िक़्ह की किताबों

से उनको समझना कि इस क़िस्म के तलबा में इतनी इस्तेसाद ही नहीं होती और न ही 'तालीमुल इस्लाम' और 'बहिश्ती ज़ेवर' वग़ैरह से इन ज़रूरी मसलों को याद करना, बल्कि बड़ों की तालीमी और इस्लाही किताबों को सिर्फ़ उर्दू में होने की वजह से देखना अपनी शान के ख़िलाफ़ समझना और जो इल्म ज़रूरी इल्मों के बाद हासिल करने चाहिए थे, जैसे मंतिक़ (लाजिक), फ़लसफ़ा, अदब, तारीख़ वग़ैरह, उनमें ख़ूब मेहनत करना, इसी तरह तज्वीदे क़रात के नाम से आवाज़ बनाने के लिए आधी-आधी रात को उठकर घंटों मश्क़ करना, भले ही मख़ारिज और हुरूफ़ (अक्षरों) की सिफ़ात और तज्वीद की क़वाइद में कमी-ज़्यादती करना पड़ जाए, हालांकि यह मालूम नहीं कि किन बातों से ईमान ख़त्म हो जाता है, किन बातों से नमाज़ फ़ासिद हो जाती है या सज्दा सह्व वाजिब होता है, मामलाते मुआशरत में मेरे ऊपर क्या फ़र्ज़ हैं, बाक़ी रहा बातिनी अख़्लाक़, उनकी अच्छाई-बुराई तो किसी पर ज़ाहिर ही नहीं होती, नामवरी चाहने वाले को इसकी क्या ज़रूरत।

4. और अवाम में ख़िदमते ख़ल्क़ और ख़ैर के कामों में बढ़-चढ़कर हिस्सा लेना, लेकिन अपनी आमदनी में हराम-हलाल की परवाह न करना, फ़र्ज़ अदा करने की फ़िक्र न करना, अपने मां-बाप, बहन-भाई, रहम के रिश्तों की ख़िदमत में सुस्ती, बल्कि क़तारहमी तक गवारा किए रहना, इन सब मिसालों में ग़ैर-अहम कामों को फ़र्ज़ों पर मुक़द्दम करना या तो नामवरी व शोहरत के जज़्बे से होता है या जिहालत से होता है।

11. जिन उलेमा की उनके उलूम व फ़ुनून की वजह से शोहरत हो जाती है और वे बड़े आलिम के नाम से मशहूर होते हैं, उनसे अगर कोई नमाज़-रोज़े का, ख़ास तौर से हज का मसला पूछे, तो चाहे

याद हो या न हो, वह ज़रूर इसका जवाब अपनी अक़्ल से बे-तकल्लुफ़ दे देते हैं, उनको यह कहना बहुत गरां होता है कि मुझे नहीं मालूम, किसी और से पूछो। आख़िरत का वबाल लेना सह्ल मालूम होता है, हालांकि इन्कार करने में कोई सुबकी की बात न थी। ग़लत बताने में जिहालत, आख़िरत की जवाबदेही से ग़फ़लत और तकब्बुर की अलामत पाई जाती है।

ज़रूरी तंबीह

इन मिसालों में ग़ौर करने से तकब्बुर का पता चल सकता है, लेकिन यह बात निहायत ज़रूरी है कि इस तरह का ग़ौर व फ़िक्र सिर्फ़ अपने बारे में करे और ख़ुद को मुतकब्बिर जान कर ज़िंदगी भर उसके इलाज की तरफ़ मुतवज्जह हो, लेकिन दूसरों के बारे में अलामतों की तलाश में न रहे और उनको मुतकब्बिर न समझे, क्योंकि इस सूरत में यह ख़ुद ही इस मरज़ का शिकार हो जाएगा। दूसरों की ऐबचीनी एक मुस्तक़िल बीमारी है और इस अनमोल नसीहत को पूरी तरह याद रखे, जो हज़रत सादी रहमतुल्लाहि अलैहि को उनके शेख़ शहाबुद्दीन सुहरवर्दी ने की थी, चुनांचे सादी फ़रमाते हैं—

मेरा पीर दानाए रोशन शहाब   दो अन्दर ज़फ़रमूद बर-रूए आब
यके आं कि बर ख़्वेश ख़ुदबीं म बाश   दिगर आं कि बर ग़ैर बदबीं मबाश

यानी मेरे रोशन ज़मीर पीर शेख़ शहाबुद्दीन क़द्द-स सिर्रहू ने कश्ती में बैठे हुए मुझे दो नसीहतें फ़रमाई थीं। एक यह कि अपने बारे में कभी ख़ुदबीनी में मुब्तला न होना और ख़ुद को औरों से बेहतर तसव्वुर न करना और दोम यह कि दूसरों के बारे में बदबीं और उनको हक़ीर व ज़लील समझने वाले न बनना। यह नसीहत

निहायत अहम और क़द्र के लायक़ है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत अबूज़र ग़िफ़ारी रज़ियल्लाहु अन्हु को नसीहत फ़रमाई थी कि अपने ऐबों पर नज़र करना तुम्हें ग़ैरों के ऐबों पर नज़र करने से रोक देगा।

तजस्सुस

यानी लोगों के ऐब तलाश करने और उनकी ग़ीबत सुनने की इजाज़त की सूरतें

1. औलाद, 2. शागिर्द, 3. वह दोस्त जिसकी इस्लाह का हक़ दूसरे दोस्त पर आता हो, 4. मुरीद, जिसने अपनी इस्लाह का काम सच्चे दिल से शेख़ के सुपुर्द कर रखा हो, पस इस्लाह की ग़रज़ से उनके ऐबों की कुरेद करना और उनकी ग़ीबत सुन लेना दुरुस्त है, बशर्तेकि दिल से उनको हक़ीर व ज़लील और ख़ुद को उनसे अफ़ज़ल तसव्वुर न करे और इस ताल्लुक़ के बग़ैर बे-ज़रूरत ऐबों का तलाश करना और ग़ीबत का सुनना जायज़ नहीं है, जिस तरह किसी का सतर देखना डाक्टर हकीम के लिए तो इलाज के वक़्त दुरुस्त है और उनके सिवा औरों के लिए हराम है और अगर बिला इरादा कश्फ़ या फ़िरास्ते अक़्ल से किसी की हरकत पर तकब्बुर का शुबहा हो जाए तो एक तो ख़ुद नादिम व शर्मिंदा हो और अपने को ऐब में शुमार करके इस्तग़्फ़ार करे और अपने इस मालूम होने को ज़न्नी ही समझे और उस पर यक़ीनी होने का हुक्म न लगाए, लेकिन अपने अन्दर बदगुमानी के ऐब को यक़ीनी तसव्वुर करे, क्योंकि किब्र पोशीदा मरज़ और क़ल्बी मामला है, इसकी ज़ाहिरी अलामतें अपने हक़ में तो

यक़ीनी हैं, इसलिए कि अपने हाल का तो ग़ौर करने से पता चल ही जाता है, लेकिन दूसरे के हक़ में ये अलामतें मुश्तबहा हैं और वजह यह है कि कुछ में तकब्बुर की सिर्फ़ सूरत होती है, न कि उसकी हक़ीक़त भी, बल्कि तबई आदत या किसी मरज़ वग़ैरह की वजह से तकब्बुर की तरह हरकतें सरज़द होती हैं, जैसे—

1. बात करते वक़्त गरदन या आंखों की ख़ास शक्ल,
2. बैठते वक़्त कुहनियां बाहर को निकालना,
3. तबई नफ़ासत की वजह से माथे पर शिकन पड़ना
4. आगे होकर मुम्ताज़ और साफ़ और उम्दा जगह पर बैठना,
5. जल्दबाज़ी की वजह से अपना काम दूसरों के काम से पहले कराने की कोशिश करना।
6. तबई वज़ादारी और शर्म की वजह से बाज़ार जाने या बाज़ार से सौदा उठाकर लाने, आदत के ख़िलाफ़ लिबास पहनने में और उनके अलावा और चीज़ों में गरानी महसूस करना।

तंबीह-1

जो बातें नीचे लिखी जाती हैं, उन पर तकब्बुर का हुक्म लगा देना, जिसमें ये बातें हों, उनको मुतकब्बिर क़रार देना किसी तरह भी मुनासिब नहीं है—

1. किसी किब्र वाले का तकब्बुर तोड़ने के लिए ऐसा बर्ताव करे जिससे उस बर्ताव करने वाले की बड़ाई ज़ाहिर होती है,

2. अल्लाह तआला की नेमत ज़ाहिर करने के लिए या किसी को नफ़ा पहुंचाने के लिए अपने ऊपर अल्लाह तआला के किसी इनाम का या अपनी फ़ज़ीलत का ज़िक्र करे।

3. कोई अपनी सादगी की बुनियाद पर अल्लाह तआला के

फ़रमाए हुए कमालात बयान करे और यह ख्याल न हो कि लोग मुझे बड़ा समझें, बल्कि इसके ख़िलाफ़ यह सोचे कि मेरी इन बातों को सुनकर मुझे मुतकब्बिर और रियाकार समझेंगे।

तंबीह-2

चालाक और होशियार मुतकब्बिरों की तरह यह हरकत भी न करे कि दिल में तो तकब्बुर भरा हो और तवाज़ो और आजिज़ी के रंग में या किसी और तरीक़े से अपने कमालों को ज़ाहिर करे।

तंबीह-3

चूंकि तकब्बुर पोशीदा और दिल से ताल्लुक़ रखने वाली बुराई है और ये ज़ाहिरी अलामतें मुश्तबह होती हैं और पूरी तरह वाज़ेह नहीं होतीं, इसलिए किसी पर मुतकब्बिर होने का हुक्म लगा देना आसान नहीं है और इसी वजह से, बावजूद इसके कि तकब्बुर ज़िना से भी ज़्यादा बड़ा गुनाह है, लेकिन इस पर दुनिया में शरई हद और सज़ाएं नहीं होतीं, हां, आख़िरत में ज़िना से भी ज़्यादा सज़ाएं आई हैं। चुनांचे हदीस में है कि जिसके दिल में राई के दाने के बराबर भी तकब्बुर होगा, वह (सज़ा के बग़ैर) जन्नत में नहीं जाएगा। इससे ज़्यादा और क्या बुराई होगी, इसलिए ख़ुद तो मामूली से एहतमाल पर, बल्कि कामिल एहतियात की बुनियाद पर ऐब बीनी और बदगुमानी से परहेज करे और अगर यही बुराइयां दूसरों में नज़र आएं तो उन्हें तकब्बुर न समझे।

तीसरा हिस्सा।

इलाज

तकब्बुर की वईदों और सज़ाओं में ग़ौर करे और उसकी बुराई और उसके नुक़्सानों को ज़ेहन में पूरी तरह हाज़िर करे, फिर अपने बातिन में तलाश करे कि तकब्बुर की क्या-क्या निशानियां पाई जाती हैं और यक़ीन करे कि मैं बीमार हूं और इलाज का मुहताज हूं। तकब्बुर के दो इलाज कुल्ली हैं जो ख़ास तौर पर तकब्बुर के हैं और इनके अलावा जो है, दूसरे तमाम रज़ाइल के दूर करने में मुश्तरक हैं और आसान भी हैं और कामियाब भी—

1. यह कि ख़ुद को किसी मुहक़्क़िक़, (तहक़ीक़ करने वाले) मुबस्सिर (तब्सरा करने वाले) और माहिर तबीब के सुपुर्द कर दे और उनके तमाम हालात की इत्तिला देता रहे और उनकी बताई हुई तदबीर पर दिल व जान से अमल करे। इस फ़िक्र व कोशिश पर अल्लाह तआला शानुहू की रहमत व इनायत मुतवज्जह होगी और शेख़ की तर्बियत और उनके फ़ैज़ से तवाज़ो और आजिज़ी पैदा हो जाएगी और ज़िक्र व शुग़ल भी जारी रखे, इससे दिल पर अल्लाह तआला शानुहू की अज़्मत ज़ाहिर होगी और उनकी सिफ़तों की तजल्ली का मुशाहदा होगा और इससे बन्दे का सरकश नफ़्स पिघल जाएगा और उसमें से तकब्बुर और सरकशी की जड़ें उखड़ जाएंगी और बातिल आरज़ूएं फ़ना हो जाएंगी और हक़ीक़ी तवाज़ो और आजिज़ी पैदा हो जाएगी और तकब्बुर बिल्कुल नेस्त व नाबूद हो जाएगा। इसके लिए शेख़ की सोहबत और उनको अपने हालात की

इत्तिला देना और एतक़ाद व मुहब्बत के साथ उनकी तज्वीज़ पर अमल करना निहायत ज़रूरी है। अगर सोहबत की नेमत नसीब न हो सके तो ख़त व किताबत के ज़रिए ताल्लुक़ क़ायम रखे, साथ ही शेख़ के मश्विरे से क़रीब रहने वाले दोस्तों में से किसी अज़ीज़ को अपना निगरां मुक़र्रर कर ले, ताकि वह नाज़ेबा हरकतों पर टोकता रहे और अपनी इस्लाह के लिए रो-रोकर और आजिज़ी व ज़ारी के साथ दुआ भी करता रहे।

हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि के इर्शाद के मुताबिक़ इस्लाह के सिलसिले में दो चीज़ें ज़रूरी हैं, जिनका ज़िक्र ऊपर आ चुका है—एक इत्तिला, दूसरी इत्तिबा। इन दोनों बातों को ख़ुद याद रखें। इस इस्लाही ताल्लुक़ के नतीजे में अल्लाह से ताल्लुक़ पैदा होगा। अल्लाह पाक का इश्क़ और उसकी हुज़ूरी हासिल होगी। इश्क़ और हुज़ूरी की हालत में अपनी बड़ाई और तकब्बुर का क्या सवाल, अपना वजूद भी अदम मालूम होगा। अलबत्ता कमाले तवाज़ो की वजह से अपने पर तकब्बुर का शुबहा हुआ करेगा—

'इश्क़ आं शोला अस्त कि चूं बर अफ़रोख़्त हर चे जुज़ माशूक़ बाक़ी जुम्ला सोख़्त'

शादबाश ऐ इश्क़े ख़ुश सौदा-ए-मा
ऐ तबीबे जुम्ला इल्लत हाए मा
ऐ दवाए नख़वत व नामूस मा
ऐ तू अफ़लातून व जालीनूस मा

तब्लीग़ी जमाअत के साथ चिल्ला

और दूसरा इलाज यह है कि वक़्त निकाल कर अपनी इस्लाह के

लिए तब्लीग़ी जमाअत के साथ सफ़र करे और इस सफ़र में ज़िक्र की पाबन्दी रखे और अमीर की फ़रमांबरदारी भी करे और उनके कहने से बयान भी कर दिया करे, लेकिन तब्लीग़ और नसीहत की नीयत से न करे, बल्कि अपनी इस्लाह और अमीर की फ़रमांबरदारी के इरादे से करे। तकब्बुर वग़ैरह रज़ाइल की इस्लाह के जितने अस्बाब हैं, वे इस तब्लीग़ी काम में जमा हैं, जैसे–

एक यह कि अपने महबूब माहौल और ज़रूरी मशाग़िल से निकलने की क़ुरबानी ली जाती है, माल कमाने के बजाए उस रास्ते में माल इस तरह ख़र्च किया जाता है कि रिया और जाह का सबब नहीं होता कि ज़्यादातर अपने पर ही ख़र्च होता है, सालेह लोगों की सोहबत मिलती है, जिसमें हर वक़्त आख़िरत के तज़्करे, मौत की याद और आपस में मुहब्बत पैदा करने के तरीक़े अख़्तियार किए जाते हैं और अपना बिस्तर ख़ुद उठाए-उठाए फिरना और अल्लाह के लिए दूसरे कमज़ोर रफ़ीक़ों की ख़िदमत करना, ख़ुद खाना पकाना, ग़रीबों के साथ मिलकर खाना, ख़ुद बरतन धोना, पैदल सफ़र करना, मस्जिदों में ज़मीन पर सोना, कभी गर्मी-सर्दी, कभी भूख-प्यास को बरदाश्त करना, कभी सोने-जागने की बे-नज़्मी वग़ैरह तमाम जिस्मानी मुजाहदे से नफ़्स की क़ूवत टूटती है, फिर गश्त में लोगों की नागवार बातें बरदाश्त की जाती हैं, अल्लाह के लिए उनके साथ तवाज़ो अख़्तियार की जाती है, उनकी बद-अख़्लाक़ी पर सब्र किया जाता है, बल्कि उनके लिए दुआएं की जाती हैं, उनको बात समझाने और मनाने के लिए दिलसोज़ी की जाती है, उनकी ख़ुशामद की जाती है, तक़रीर व बयान की आदत और तजुर्बा न होने के बावजूद मज्मा के अन्दर टूटे-फूटे लफ़्ज़ों में बयान किया जाता है। साथियों के हक़ों के

अदा करने और अपने हक़ों के छोड़ने, बड़ों का इकराम करने और छोटों से मुहब्बत करने की मश्क़ होती है। जाह व माल के ज़िक्र के बजाए अल्लाह की बड़ाई और अल्लाह से सब कुछ होने और अपने कुछ न होने का ज़िक्र होता है। बुराइयों को दूर करने वाली हक़ीक़ी नमाज़ पढ़ने को सीखना और अमल में लाना होता है, तिलावत व ज़िक्र की तस्बीहात की पाबन्दी होती है, जिससे दिल में नूर और नर्मी पैदा होती है। इन सब चीज़ों के फ़ज़ाइल की तालीम और ज़रूरी इल्म का सीखना, सिखाना होता है, जिससे अपनी जिहालत और कोताही सामने आती है।

ग़रज़ इस काम में मुजाहदा, ज़िक्र, नेक सोहबत, तालीम, दुनिया से यकसूई, अमीर की इताअत वग़ैरह नफ़्स के सब ज़रूरी हिस्से शामिल हैं और वे सब बातें हैं जिनको आला ईमानी व एहसानी कैफ़ियत पैदा करवाने के लिए मशाइख़े सुलूक तरीक़त से पहले उनके लाज़िम होने को लाज़िम बताया करते हैं और वे लोग ये शुरू के मामूलात इंफ़िरादी तौर पर तालीम करते हैं। तब्लीग़ी जमाअत में इसकी इज्तिमाई सूरत है, जिससे अपनी इस्लाह के साथ दूसरों की इस्लाह भी होती है, इसलिए आजकल उम्मत के आम बिगाड़ की हालत में इस आम तरीक़ेकार की बहुत ज़रूरत है, जैसा कि आम हालात में सेहत की हिफ़ाज़त के मर्कज़ और बाक़ायदा शफ़ाख़ाने काफ़ी होते हैं, लेकिन किसी मरज़ की वबा आम होने पर उन्हें काफ़ी नहीं समझा जाता, बल्कि मुहल्ले-मुहल्ले घूम-घूम कर घर-घर पहुंच कर टीके और दवाएं तक़सीम की जाती हैं। इसमें माहिर डाक्टरों की सरपरस्ती में अवाम से भी काम लिया जाता है।

आजकल इस तब्लीग़ी काम के फ़ायदे और नतीजे की बुनियाद

पर उलेमा, मशाइख़ इसकी ज़रूरत पर ज़्यादा ज़ोर देते हैं और अह्ले बातिन मशाइख़ तो बशारतों और ताईद ग़ैबी की बुनियाद पर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इस काम पर ख़ुसूसी तवज्जोह होना बयान फ़रमाते हैं और इस काम पर अल्लाह तआला की ख़ास इनायत और क़ुबूलियत का एलान फ़रमाते हैं। तकब्बुर के इलाज के सिलसिले में मुशाहदा है कि जिन लोगों ने उसूलों के तहत अपनी इस्लाह की नीयत से कुछ वक़्त लगाया होता है, उनमें तवाज़ो की सिफ़त नुमायां होती है। उनकी तवाज़ो से यह मालूम हो जाता है कि यह तब्लीग़ी जमाअत का आदमी है। हां, जो कोई दूसरी ग़रज़ों के तहत काम करता हो और अपनी इस्लाह की नीयत न रखता हो, तो यही काम उसमें उज्ब पैदा कर देता है कि वह दूसरे किसी भी दीनी काम और दीनी शख़्सियत को काम में नहीं लाता। यह ऐसा ही है जैसे कोई दवा तक़्सीम करने वाला दिन-रात खूब काम करके यह समझने लगे कि बस काम तो मैं करता हूं। ये डाक्टर और सेहत के मुहकमे की कुर्सियों पर बैठने वाले अफ़सर सब बेकार हैं। यह ग़लत नतीजा, उसूलों के ज़ाया कर देने से ज़ाहिर होता है। तब्लीग़, इल्म व ज़िक्र की कोई भी लाइन हो, उसूलों के ख़िलाफ़ और आदाब की रियायत न होने से हर जगह ग़लत नतीजे निकलेंगे।

तवाज़ो पैदा करने की कुछ दूसरी तर्कीबें

इनमें से जो तदबीर अपने हाल के मुनासिब हो, उसे ख़ुद बे-तकल्लुफ़ या तकल्लुफ़ के साथ अख़्तियार करे और दूसरे ज़रूरतमंदों को भी उस पर अमल करने का मश्विरा दे। इस कोशिश और मेहनत के बाद अल्लाह तआला का फ़ज़्ल शामिले हाल होगा और इस्लाह की और सही रास्ते पर चलने की शक्ल निकल आएगी और बुज़ुर्गों

की कुछ हिकायतें भी दर्ज की जाएंगी और उनसे यह पता चल जाएगा कि इन लोगों ने इस्लाह के सिलसिले में कैसी-कैसी तक्लीफ़ें उठाई हैं—

अव्वल यह कि इलाज के शुरू में हर दिन मुक़र्रर वक़्त पर आधा घंटा या उससे कम, सबसे यकसू और तंहा होकर अपनी पैदाइश और मौजूदा हालत और अंजाम इन तीनों में ग़ौर व फ़िक्र किया करे, यानी यह सोचे कि मेरी असल क्या है—

1. नापाक पानी के क़तरे से बना,

2. फिर नापाक ख़ून से परवरिश पाई,

3. उस वक़्त की आंख, कान और मुंह, सबमें गन्दगी भरी हुई है,

4. पेट में तो ख़ालिस और बेइंतिहा बदबूदार और काफ़ी मिक़्दार में नजासत भरी हुई है, जिसको लादे हुए फिर रहा हूं। इसमें से अगर अन्दर से ज़रा भी हवा निकलती है, तो इतनी बदबूदार होती है जिससे पास बैठने वालों को भी नफ़रत होती है और ख़ुद भी शर्मिन्दगी उठानी पड़ती है। अल्लाह तआला ने अपनी सत्तारी से परदा पोशी फ़रमा रखी है, न तो नजासत नज़र आती है और न हर वक़्त उसकी बदबू ज़ाहिर होती है।

5. पेट भरने के बाद उसको निकालने की ज़रूरत भी पेश आती है जिसके लिए तंहाई में या लोगों से दूर जंगल में जाना पड़ता है और आसानी के साथ ख़ारिज हो जाती है। अगर यह रुक जाए और बन्द पड़ जाए तो सख़्त मुसीबत का सामना होता है।

6. साथ ही मरने के बाद ज़ाहिरी जिस्म भी सड़ जाता है। यह भी अल्लाह तआला की सत्तारी है कि जल्दी से नहला कर और ख़ुश्बू लगाकर मिट्टी में छिपा देने का हुक्म फ़रमाया है। अगर यह जिस्म

दो या तीन दिन पड़ा हो तो एक मुर्दे की बदबू से पूरा मुहल्ला परेशान हो जाए, और घर छोड़कर भाग जाए। फिर क़ब्र में जो हालत पेश आती है, वह भी मालूम है कि पेट फटकर नजासत बाहर आ जाती है और आंखें भी निकल कर गिर पड़ती हैं और आख़िर में सारे गोश्त के कीड़े बन जाते हैं और भयानक और बे-इंतिहा नफ़रत के लायक़ होकर मिट्टी बन जाता है और मिट्टी में मिल जाता है। यह सोचकर अपनी तकब्बुर से भरी ख़स्लतों पर ज़ुबान से भी धीरे-धीरे कहे कि यह तो तेरी हक़ीक़त है और इस पर भी दूसरों की ग़ीबत करता है, हसद करता है, बड़ाई के काम करता है, तू बहुत ही बेवक़ूफ़ है, बहुत नालायक़ और मुज्रिम है, अल्लाह की रहमत और बख़्शिश के सिवा तेरा कोई ठिकाना नहीं, इसी तरह रोज़ आधा घंटा लगाए, फिर वक़्त कम करता जाए। जब अपनी ज़िल्लत का एहसास हो जाए और दिल में उसका ख़्याल पूरी तरह जम जाए, तो यह मुराक़बा कभी-कभी कर लिया करे और अगर इसकी भी फ़ुर्सत न मिले तो कम से कम बैतुलख़ला में ही अपनी हालत पर ग़ौर कर लिया करे, क्योंकि वहां तो कोई और काम नहीं होता और वहां इसका सोचना इसलिए भी आसान है कि नज़र भी आ रहा है। दूसरे वक़्तों में ये बातें भी सोचा करे जो नीचे दर्ज की जाती हैं—

1. यह मौजूदा ग़लाज़त की हालत तो ग़ैर-अख़्तियारी है और इसमें गुनाह भी नहीं है। अल्लाह तआला ने सिर्फ़ अपने फ़ज़्ल व करम से सत्तारी फ़रमा कर इस हालत को छिपा रखा है और ज़ाहिरी जिस्म को पाक और साफ़ बनाया है, लेकिन अपनी हक़ीक़त तो पूरी तरह मालूम है, फिर तकब्बुर का मौक़ा कहां है।

2. इसके अलावा बातिनी और मानवी गन्दगियां हैं, जिनमें

तकब्बुर और दूसरी शह्वात सभी शामिल हैं, यह भी ज़ाहिरी नजासत से किसी दर्जे में कम नहीं है, बल्कि लाख दर्जा बढ़कर है, जैसे अपने पिछले रास्ते से नजासत का बाहर निकालना एक नफ़रत के लायक़ और शर्म वाला काम है, लेकिन इसको ज़रूरी हाजत कहते हैं, इसलिए इसमें गुनाह नहीं है, बल्कि फ़रागत हासिल करना ज़रूरी है, क्योंकि तक़ाज़े की हाजत में नमाज़ भी मक्रूह हो जाती है। इस हालत में ग़ौर करने से अपनी हक़ारत व ज़िल्लत वाज़ेह हो जाती है और आजिज़ी की नेमत नसीब हो जाती है जो अल्लाह तआला के यहां मरग़ूब व महबूब है। यह सिफ़त अल्लाह के फ़ज़्ल व इनाम और क़ुबूलियत और फ़ुयूज़ व बरकात के हासिल करने का ज़रिया है। फिर यह अमल सुन्नत के मुताबिक़ और सबसे अच्छी नीयत से हो, तो यह नेक काम शुमार होकर आख़िरत का ज़ख़ीरा बन जाता है, लेकिन बातिनी गन्दगी का माद्दा जो इस जिस्म में मौजूद है, अगर उसको परवरिश किया चाहे, दिल ही में रखे या क़ौल व फ़ेल व अमल के ज़रिए ज़ाहिर भी कर दिया तो इंसान सख़्त मुज्रिम बनकर सैकड़ों क़िस्म के हैवानी और शैतानी गुनाहों में मुब्तला हो जाता है। अपनी सब ख़राबियां सोचने से मालूम हो सकती हैं और जिनको भूल गया है, वे भी तो आमालनामे में लिखी हुई मौजूद हैं, जिन पर आख़िरत में रुसवाई और अज़ाब है। अल्लाह तआला ने सिर्फ़ अपने फ़ज़्ल से बहुत कुछ सत्तारी फ़रमा रखी है। हमारा बातिनी हाल लोगों को मालूम नहीं वरना, लोग नफ़रत करें और कोई क़रीब भी न आवे। इस माद्दे के मौजूद होने के पेशेनज़र तो इंसान हुस्ने ख़ात्मा से पहले कुत्ते और सुवर से भी बदतर है, क्योंकि सुवर में कुफ़्र करने का माद्दा नहीं है। बड़े से बड़े बुज़ुर्ग भी इस ख़ौफ़ से लरज़ां व तरसां रहते हैं कि यह माद्दा किसी वक़्त फूट पड़े और ख़ात्मा कुफ़्र पर हो जाए।

अगर ख़ुदा-न-ख़्वास्ता ऐसा हो गया तो यक़ीनन कुत्ते और सुअर उससे अफ़ज़ल होंगे, क्योंकि वे तो क़ियामत के दिन मिट्टी हो जाएंगे और इंसान हमेशा दोज़ख़ में जलता रहेगा। उस वक़्त यह अशरफ़ुल मख़्लूक़ात होने के बावजूद मिट्टी हो जाने की तमन्ना करेगा, 'या लै-त नी कुन्तु तुराबा' और जो यहां ख़ुद को मिटाकर मिट्टी में मिला देता है, उसको अल्लाह तआला रफ़अत और बुलन्दी अता फ़रमा देते हैं। हदीस में है—

"من تواضع لِلّٰہ رفعہ اللّٰہ"

'जो अल्लाह के लिए आजिज़ी अख़्तियार करता है, अल्लाह पाक उसे बुलन्द कर देते हैं।'

इसी तरह अपने बातिनी ऐबों और सारी उम्र के किए हुए गुनाहों को सोचा करे जो ग़ौर करने से याद आ सकते हैं, साथ ही यक़ीन करे कि मेरे आमालनामे में सबका रिकार्ड मौजूद है और हर गुनाह अपनी पूरी कैफ़ियत और गवाहों और वक़्त और जगह समेत मौजूद है और जिन गुनाहों से तौबा कर चुका है, माफ़ी की उम्मीद रखते हुए उनका सोच लेना काफ़ी है। इससे शर्मिंदगी और डर पैदा होगा और तकब्बुर, हसद, चुग़ली, ग़ीबत वग़ैरह सब चीज़ें मिटकर बेनाम व निशान हो जाती हैं, फिर आजिज़ी पैदा होकर अल्लाह तआला की रहमत शामिले हाल होगी। ये सब गन्दगियां खाद का काम देंगी और रफ़अ़त व बुलन्दी नसीब होने का ज़रिया बन जाएंगी। इसी तरह जब अपने आमाल की बातिनी हालत में ग़ौर करेगा तो नमाज़ और दूसरे नेक आमाल भी गुनाह नज़र आने लगेंगे, जैसे नमाज़ की बातिनी हालत व कैफ़ियत कि उसमें इख़्लास व एहसान, ख़ुशूअ़ व ख़ुज़ूअ़ और तवज्जोह इलल्लाह का हुक्म है, लेकिन हमारी नमाज़ सरासर

ग़फ़लत और वस्वसों का मज्मूआ है। अल्लाह तआला के सामने खड़े होकर उनसे मुख़ातब होने में जो हालत होनी चाहिए, क्या हमारी हालत वही है, इसमें ग़ौर करने से मालूम हो जाएगा कि हम मामूली दर्जे के हामिल के सामने भी इस तरह बे-फ़िक्री और लाउबालीपन से खड़े नहीं होते, जिस तरह अपनी नमाज़ में अल्लाह के सामने खड़े होते हैं, यह इबादतों में सबसे अफ़ज़ल इबादत का हाल है, तो बाक़ी इबादतों का क्या हाल होगा?

3. इसी तरह अपनी ईमानी हालत में भी ग़ौर व फ़िक्र करे कि वायदा-वईद की आयतों और हदीसों पर किस दरजे का यक़ीन है। नतीजा यही निकलेगा कि क़ब्र, हश्र, जन्नत-दोज़ख़ के मुताबिक़ बिल्कुल सरसरी अक़ीदा है, जो कि ज़िंदगी पर असर अन्दाज़ नहीं होता, दुन्यवी नफ़ा-नुक़्सान की ख़बरों पर जो असर और अमली हालत होती है, उसके मुक़ाबले में अल्लाह और रसूल की ख़बरों का असर कुछ भी तो नहीं है। जैसा कि पहले भी अर्ज़ कर चुका हूं कि हमारी हालत से मालूम होता है कि हम दुनिया व आख़िरत के दो ख़ुदा अलग-अलग मानते हैं। इसी तरह ग़ौर करने पर दिल से इस्तग़फ़ार करने की तौफ़ीक़ नसीब होगी और अपने नेक आमाल पर नज़र नहीं रहेगी, बल्कि सिर्फ़ अल्लाह की रहमत पर नज़र होगी। फिर अल्लाह तआला हक़ीक़ी इज़्ज़त व रफ़अत अता फ़रमाएंगे, लेकिन यह इज़्ज़त अल्लाह तआला की जनाब में तज़ल्लुल और तवाज़ो अख़्तियार करने पर मौक़ूफ़ है।

इसीलिए हदीस में है कि जो आदमी अल्लाह तआला के लिए तवाज़ो अख़्तियार करता है, वह उसका दर्जा बुलन्द फ़रमा देते हैं। इस मुराक़बे के बाद सलातुत्तौबा की नीयत से दो रक्अत नफ़्ल पढ़े

और जिन ज़ाहिरी और बातिनी ऐबों का इस्तिहज़ार हुआ है उन पर ख़ूब नदामत के साथ तौबा करे, ख़ास तौर पर तकब्बुर दूर करने के लिए दुआ करे। ये सब अश्ग़ाल कम से कम चालीस दिन तक करता रहे।

4. नमूने के तौर पर तकब्बुर की जो अलामतें बयान की हैं, अगरचे उन सबमें तकब्बुर का पाया जाना ज़रूरी नहीं है, लेकिन एहतमाल तो है और नफ़्स को उनमें तकब्बुर न होने का धोखा भी हो सकता है और वजह यह है कि नफ़्स और शैतान जो हर वक़्त उनके साथ लगे होते हैं, उनका काम यही है कि हमेशा धोखा देने की कोशिश में लगे रहें, इन आदतों और तौर-तरीक़ों को तकल्लुफ़ के साथ एहतमाम करके ख़त्म करे, जैसे, बात-चीत, चाल-ढाल, लिबास और हरकतों में कुछ अर्सा के लिए नफासत पसन्दी, तबई नज़ाकत, वज़ादारी वग़ैरह उनमें से किसी चीज़ का भी ख़्याल न करे और न किसी के अच्छा-बुरा समझने की तरफ़ तवज्जोह करे। ज़ाहिरी बीमारियों और घावों के लिए कभी-कभी अस्पतालों में ख़ास लिबास पहनते हैं और एक वक़्त में कई तरह की पट्टियां बांधते हैं और कुछ भी ख़्याल नहीं करते, इसी तरह इस मुह्लिक बीमारी को दूर करने के लिए कम से कम यह करे कि निहायत सादा लिबास पहन ले जो उसकी हैसियत से कम दर्जे का हो और यह न सोचे कि लोग हक़ीर समझेंगे या सूरत-शक्ल मांगने वालों जैसी बन जाएगी और लोग बख़ील कहेंगे और ताने देंगे। यह उपाय इलाज के तौर पर कुछ दिनों के लिए अख़्तियार कर ले, फिर तबियत व हैसियत के मुवाफ़िक़ पहनना शुरू कर दे। ग़रज़ ये सब उपाय वक़्ती हैं जो कुछ दिन अमल में लाने हैं।

5. अमीर लोगो से मिलना-जुलना और उनकी सोहबत छोड़ दे,

चाहे इसमें तब्लीग़ और ज़रूरतमंदों की मदद वग़ैरह, इस तरह के मुनाफ़े भी फ़ौत हो जाएं।

6. ग़रीबों के पास बैठे, उनकी दावत क़ुबूल किया करे, उनकी जानी ख़िदमत करे, यानी उनके काम किया करे, अवाम की ख़िदमत करे।

7. मुलाज़िम और बच्चों के होते हुए घर का सौदा-सब्ज़ी, आटा वग़ैरह ख़ुद लाए और अपनी ताक़त के मुवाफ़िक़ उसे ख़ुद ही उठाए, बे-ज़रूरत मज़दूर भी न खोजे, बल्कि जो पैसे मज़दूरी में देते हैं, उसे चुपके से ख़ैरात कर दिया करे।

8. अवाम में से हर किसी को पहले ख़ुद ही सलाम किया करे। इस बारे में तवाज़ो और ख़िदमत अवाम ही की फ़ायदेमंद है। मशाइख़ की ख़िदमत तो बड़ाई और फ़ख्र की चीज़ है।

9. अपनी ग़ीबत, बुराई और बुहतान वग़ैरह सुनकर दिफ़ा और सफ़ाई की फ़िक्र न करे, बल्कि अपने बातिनी ऐबों के पेशे नज़र शुक्र करे कि मेरी बुराइयों में से बहुत थोड़ी बुराइयां बयान हुई हैं और इसमें मेरा भी फ़ायदा है कि गुनाहों का कुछ कफ़्फ़ारा हो जाएगा।

10. किसी वक़्त गुस्सा ज़ाहिर हो जाए तो छोटे से भी माफ़ी मांग ले।

11. अगर कोई उसका हक़ दबा ले या उस पर ज़्यादती करे तो अपना हक़ वसूल करने की और बदला लेने की कोशिश न करे।

12. हर एक की नसीहत और राय को मानने के लिए तैयार रहे, लेकिन शर्त यह है कि यह नसीहत तबियत के ख़िलाफ़ हो और शरीअत के ख़िलाफ़ न हो। अगर बिल्कुल समझ में न आए तो किसी दूसरे से मश्विरा कर ले।

13. अगर सदक़ा-ज़कात वग़ैरह का मुस्तहिक़ हो और लेता भी हो तो उसे चुपके से लेने के बजाए औरों के सामने क़ुबूल करे और सदक़ा के बजाए ज़कात ज़्यादा लिया करे, क्योंकि उसमें तवाज़ोअ ज़्यादा है, साथ ही सदक़ा के दूसरे मसारिफ़ भी बहुत से हैं और ज़कात का मसरफ़ कभी-कभी मुश्किल से मिलता है, इसलिए अगर ले ले तो उसमें देने वाले की एक तरह की ख़िदमत भी है कि उसे फ़रीज़े की अदाएगी में मदद भी मिलती है, फिर अगर अपने इस्तेमाल के लिए ज़्यादा ज़रूरत न हो तो ख़ुफ़िया तौर पर सदक़ा कर दे, क्योंकि सदक़ा भी किब्र का एक इलाज है।

14. मौत को ज़्यादा से ज़्यादा याद किया करे और जिस जगह भी मौक़ा मिल जाए, पूरी कोशिश के साथ मैयत की तज्हीज़ व तक्फ़ीन में शिर्कत किया करे, ख़ास तौर से अपने हाथ से नहलाए और ख़ुद क़ब्र में उतारे। अगर नहलाने का तजुर्बा न हो तो पानी डलवा दे या कोई और ख़िदमत बजा लाए। इस क़िस्म की तदबीरों में से वही तदबीर फ़ायदेमंद होगी और इलाज समझी जाएगी जो तबियत और नफ़्स पर गरां हो और हैसियत के ख़िलाफ़ हो और ज़्यादा फ़ायदेमंद भी उसी वक़्त तक है, जब तक यह गरानी रहे और आदत हो जाने पर असर भी कम हो जाता है। इस शक्ल में छोड़ देने में भी कोई हरज नहीं है, चुनांचे लगातार इस्तेमाल के बाद दवा भी खाना बन जाती है, यानी फ़ायदा तो देती है, लेकिन दवा की तरह ज़्यादा असर नहीं करती। पस अगर मरीज़ इन इलाजों का पहले ही से आदी हो तो उसको इनके अलावा और दूसरे इलाज अख़्तियार करने होंगे। मरीज़ का मिज़ाज सूफ़ियाना है और वह अमीरों से नहीं मिलता और फ़क़ीरों की ख़िदमत करता है तो अब उसको अमीर

लोगों की ख़िदमत करनी चाहिए, क्योंकि उसका तकब्बुर बुज़ुर्गी की लाइन का है, साथ ही अगर वह तिजारत और मज़दूरी वग़ैरह नहीं करता, तो उसको ज़रूरत न होने के बावजूद भी तिजारत व सनत वग़ैरह में मश्ग़ूल होना चाहिए। पस ये तदबीरें मरीज़ों के हालात के एतबार से बदलती रहती है।

15. तंहाई में ऊपर लिखा हुआ मुराक़बा करे और तकब्बुर वालों और तवाज़ो वालों के क़िस्से भी पढ़ा करे, जिसके लिए 'अकाबिर का तक़्वा' 'अकाबिर उलेमा-ए-देवबंद' वग़ैरह किताबें बहुत फ़ायदेमंद साबित होंगी।

16. इलाज के सिलसिले में **मलफ़ूज़ात मौलाना सईद अहमद ख़ां साहब।**

एक हदीस में आया है–

"تمعددوا واخشو شنوا وامشوا حفاةً"

'यानी सादा खाओ, मोटा पहनो और बग़ैर जूते के चला करो।'

इसके अलावा तकब्बुर का इलाज यह भी है कि आधी पिंडुली तक कुरता और शलवार बांधो और अमामा बांधने की आदत डालो और कपड़े को पैवन्द लगाए बग़ैर न छोड़ो और कभी सिरका, रद्दी खजूर, जौ की रोटी भी खाया करो, गधे पर सवारी भी किया करो, यह सब तकब्बुर के इलाज की नयत से किया करो। जाने-अनजाने को ख़ुद पहल करके सलाम किया करो।

मुत्तक़ी हज़रात के लिए ग़ौर व फ़िक्र का वक़्त

अल्लाह तआला ने महज़ अपने फ़ज़्ल व रहमत से बन्दे को ऐसे

दीनी माहौल में ख़ादिमाना ताल्लुक़ नसीब फ़रमाया है, जहां तालीम व तब्लीग़, तसव्वुफ़, दुरवेशी सारे ही दीनी शोबों से मुताल्लिक़, नए-पुराने, ख़ास व आम, कच्चे-पक्के मुख़्तलिफ़ हज़रात से वास्ता पड़ता है।

इस माहौल में जहां आपसी मुहब्बत, ख़ुलूस, दीनी ख़ैरख़्वाही, दीनी फ़ज़ाइल के हासिल करने की कोशिश, माल व जाह का ईसार, 'जुड़ो जो तुम तुमसे कटे' की तामील के मनाज़िर, ख़िदमत के मौक़ों पर आगे और जाह के मौक़ों में सबसे पीछे रहने, बल्कि छिपे रहने वग़ैरह के हालात देखे, वहां नफ़्स व शैतान को इन्हीं दीनी आमाल में इसके उलट ऐसे जज़्बात भी पैदा करते देखा कि उनकी हरकतों ने ख़ालिस दुनियादारों को भी मात कर दिया। इस पर ख़ुद उस तबक़े से और उस तबक़े के क़रीब के दुनियादार तबक़े के इश्कालात होते रहते हैं, उनके जवाब को बयान करने का अर्से से ख़्याल था, क्योंकि हज़रत मुर्शदी दामत बरकातुहुम की बरकत से उस शैतानी साज़िश की हक़ीक़त क़ल्ब पर तो बहुत वाज़ेह थी, मगर बयान पर क़ुदरत और उसकी लियाक़त नहीं और नाक़िस बयान से कुछ पढ़ने वालों के ग़लतफ़हमी में पड़ने का ख़तरा था।

पिछले साल हज़रत मुर्शदी के इर्शाद से एक रिसाला 'अकाबिर का तक़्वा और तवाज़ो' तैयार किया और 'तवाज़ो' की ज़िद 'तकब्बुर' पर लिखा गया। इन दोनों रिसालों के मज़्मूनों के सामने आने से बयान आसान हो गया और यह भी ख़्याल है कि अगर पढ़ने वाले इन दोनों रिसालों को ग़ौर से पढ़ने के बाद इस मज़्मून को देखेंगे तो कोई ग़लतफहमी पैदा न होगी और मेरी बात समझ में आ जाएगी, बल्कि ख़ुद इश्काल ही ख़त्म हो जाएगा। अल्लाह तआला

अपने फ़ज़्ल से बन्दे और पढ़ने वालों को अमल की भी तौफ़ीक़ दें। समझाने के लिए दो बातें अर्ज़ करता हूं, फिर इश्कालों के जवाब अर्ज़ करूंगा।

एक यह कि इस दीनदार तबक़े में शैतान को कामियाबी इस शक्ल में होती है कि हर इंसान को ज़िंदगी गुज़ारने के लिए कुछ माल की ज़रूरत होती है और ज़ुल्म से बचने के लिए और अपने हक़ों की हिफ़ाज़त के लिए कुछ जाह की भी ज़रूरत है। इन ही दो चीज़ों यानी माल व जाह का नाम दुनिया है। अक्सर लोगों ने इन दोनों चीज़ों के हासिल करने के लिए ज़ाहिरी जाने-पहचाने दुन्यवी ज़रिए तिजारत, मुलाज़मत, हिरफ़त (उद्योग-धन्धों) वग़ैरह को अख़्तियार किया और दिन-रात इसमें मश्ग़ूल हुए। ये लोग दुनियादार कहलाते हैं।

दो-चार समझदारों ने फ़ानी दुनिया में मश्ग़ूल रहने के बजाए अपने वक़्तों को आख़िरत के मामलों में मश्ग़ूल कर दिया, बचपन से आख़िरत ही के बारे में इल्म हासिल किए, बड़े होकर दीनी ख़िदमतों में अपने को लगा दिया, लेकिन ज़िंदगी गुज़ारने के लिए उनको भी कुछ माल व जाह की ज़रूरत थी। इसके लिए कुछ ने तवक्कुल किया, और कुछ ने शरई इजाज़त से इस मामले में दुनियादारों की मदद हासिल करने के लिए वज़ीफ़े और तंख़्वाह वग़ैरह के तरीक़े निकाल लिए कि ये लोग उनकी ज़रूरतों के कफ़ील होकर उनको दीनी ख़िदमत के लिए फ़ारिग़ रखें। यह शक्ल दुनियादारों के लिए दारैन (दुनिया और आख़िरत दोनों) के लिहाज़ से बरकत और अज्र की वजह बनी और दीनी ख़ादिमों के अज्र में भी कोई कमी न आई, क्योंकि इंसानी ज़रूरत की बुनियाद पर ख़ुद शरीअत ने हलाल कमाई को इबादतों के बाद फ़र्ज़ क़रार दिया और ज़रूरत से ज़्यादा को

मुबाह, लेकिन ज़रूरत से ज़्यादा जाह को कि वह असल ज़िंदगी के मक़्सद यानी बन्दगी के ख़िलाफ़ है, हराम क़रार दिया। इंसान की हक़ीक़ी ज़रूरतें तो थोड़ी सी जगह और थोड़े से माल के साथ पूरी हो जाती हैं, लेकिन इंसान के अन्दर नफ़्सानी हिर्स और अपनी बड़ाई और इज़्ज़त की ज़बरदस्त ख़्वाहिश भी है, जिसको पूरा करने में बजाए कुछ नफ़ा के ख़ुद इंसान को और पूरे समाज को ज़बरदस्त नुक़्सान होते हैं, इसलिए शरअ शरीफ़ ने नफ़्स के इन तक़ाज़ों को मज़्मूम ठहराया है। जिस आदमी ने बा-क़ायदा इलाज करवा कर इन ग़लत और मना किए हुए तक़ाज़ों को दबाया नहीं, वह नफ़्स की मुरादों को पूरा करने की ज़रूर कोशिश करता है। दुनियादार तो अपने दुनिया के नक़्शे से यह मक़्सद हासिल करते हैं और दीनदार कहलाने वाले अपने दीनी नक़्शों, जैसे इल्मी शोहरत, शागिर्दों, मुरीदों की कसरत, इबादतों औराद, मुजाहदात में नाम पैदा करना और तक़्वा के मामलों में शोर करके एहतमाम करना वग़ैरह से अपना मक़्सद पूरा करते हैं। इनमें कुछ की तवज्जोह दुनिया के एक हिस्से माल की तरफ़ है और अक्सर की तवज्जोह दूसरे हिस्से जाह की तरफ़ होती है कि माल की तरफ़ सीधे-सीधे तवज्जोह करना उनके मंसब और शान के ख़िलाफ़ है और माल माद्दी चीज़ है, इसलिए यह ऐब जल्द ज़ाहिर भी हो जाता है लेकिन जाह बातिनी चीज़ है और उसकी पकड़ करने का हर आदमी को हक़ भी नहीं।

यह दीनी तबक़ा दुनियादार अवाम को तो ख़ातिर ही में नहीं लाता, जाह का सारा मुज़ाहरा अपने ही तबक़े के लोगों में करता है, उन्हीं की ग़ीबत, ऐबजूई, तह्क़ीर और उनमें से कुछ को गिराने की कोशिश करता है, ताकि उन पर अपनी बड़ाई, इज़्ज़त, अपने तक़्वे,

तज़्क़िया के ज़ाहिर करने के लिए रास्ता साफ़ हो। वे चाहते हैं कि हमारे साथ काम करने वाले हमें बड़ा बनाकर रखें, हमारी बात मानें, हम पर कोई एतराज़ न करें या तो निज़ामत, इमारत हाथ में हो या हमारा ओहदा बेशक कोई न हो, लेकिन क़ूवते हाकिमा हमारे हाथ में हो और शैतान इस बात की तरफ़ मुतवज्जह ही नहीं होने देता कि इन दिली शैतानी मामलों से वह मुत्तक़ी ज़ानियों, शराबियों और चोरों से भी नीचे गिर जाता है, क्योंकि बड़ाई ख़ुदा का ख़ास्सा है, उसको अख़्तियार करने में ख़ुदा का मुक़ाबला है, उसका ताल्लुक़ शिर्क व कुफ़्र से है, जिसको शैतान ने अख़्तियार किया और मरदूद हुआ, इसलिए इस बग़ावत की लाइन के जुर्म की माफ़ी ही नहीं। हदीस पाक में है–

"لا يدخل الجنة من كان فى قلبه مثقال ذرة من كبر يعنى على اخيه المسلم"

'लेकिन चूंकि निफ़ाक़ की तरह छुपा मामला है, इसलिए दुनिया में इस पर कोई हद जारी नहीं हुई, गो उसके नतीजे में मुतकब्बिर को दुनिया में भी रुसवाई और ज़िल्लत उठानी पड़ती है और चोरी, ज़िना वग़ैरह हैवानी जुर्म, कोताही, ग़फ़लत और रज़ालत व पस्ती की लाइन के जुर्म हैं, इन पर गवाही और उनका यक़ीनी सबूत मिल सकता है, शर्म व ज़िल्लत उसके साथ शामिल है। अल्लाह को अपने प्यारे बन्दे के नुक़्सान की ख़ातिर ये हरकतें पसन्द नहीं, उसने अपनी रहमत से इन चीज़ों को मना किया और नाफ़रमानी पर दुनिया व आख़िरत में हाथ काट देने और पत्थरों से हलाक कर देने का हुक्म फ़रमाया। आख़िरत में दोज़ख़ की वईद सुनाई, लेकिन इन हरकतों के करने वाले को अपना क़ुसूरवार क़रार दिया, अपना बाग़ी क़रार नहीं दिया। जहां

इन गुनाहों का ज़िक्र फ़रमाया, वहां इनसे तौबा करने वालों के लिए अपने सत्तार-ग़फ़्फ़ार होने का बयान भी फ़रमाया और करने वाले को तौबा की तौफ़ीक़ भी हो जाती है कि इन गुनाहों की बुराई बहुत ज़ाहिर और मारूफ़ होती है, ख़ुद गुनाहगार अपने कामों को बुरा समझता है, डरता है, ग़फ़लत और नफ़्स के ग़लबे की वजह से कर गुज़रता है, लेकिन दिल से शर्मिन्दा होता है और नदामत ही तौबा है, गोया तौबा की बड़ी शर्त नदामत तो मौजूद ही होती है, बाक़ी शर्तें यानी गुनाह से अलग होना, आगे के लिए बचने का अज़्म करना वग़ैरह शर्तें पूरी करके तौबा करना आसान होता है। चुनांचे अल्लाह तआला इन चीज़ों से तौबा करके तक़्वा अख़्तियार करने वालों को ऐसा क़ुबूल करते हैं जैसा कि कुछ हुआ ही नहीं। हदीस पाक में है—

"التائب من الذنب كمن لا ذنب له"

सच्ची तौबा करने वालों के आमालनामे से भी उनका ज़िक्र मिटा देते हैं, फ़रिश्तों को भुला देते हैं। उनके आज़ा और वह मक़ाम, जहां यह जुर्म हुए, वहां से असर को ख़त्म कर देते हैं और उन पर कोई गवाह भी बाक़ी नहीं रखते, गुनाह तो मिटा देते हैं और तौबा करने का नेक अमल बाक़ी रखते हैं, जिस पर उस तौबा करने वाले को अपना मुक़र्रब बना लेते हैं और तौबा करने वाले को जब इन हरकतों का ख्याल आ जाता है तो यह ख्याल तकब्बुर और उज्ब जैसे ख़बीस मरज़ों से बचे रहने की वजह बन जाता है, इस तरह ये पिछले जुर्मों को उन नेकियों के बाग़ का खाद बना देते हैं। इनमें कुछ लोग दूसरे आमाल के ज़रिए तरक़्क़ी करके उस मक़ाम के हो जाते हैं कि इन पिछले जुर्मों पर नदामत की वजह से उनकी बुराइयां भलाइयों से बदल दी जाती हैं—

اولئك يبدل الله سيئاتهم حسنٰت۔

ऐसा बन्दा हमेशा बन्दगी की सिफ़तों यानी ज़िल्लत व इंकिसारी पर क़ाइम हो जाता है, जिस पर अल्लाह तआला उसको अपनी तरफ़ से हक़ीक़ी इज़्ज़त व बुलन्दी अता फ़रमाते हैं। अब यह हाल होता है कि वह बन्दा अपनी नज़र में तो पस्त होता है और अल्लाह के दिए हुए जाह से लोगों में मुअज़्ज़ज़ होता है। हदीस पाक में इस हालत के तलब करने की तर्ग़ीब आई है–

اللّٰهم اجعلنى فى صغيرًا وفى اعين الناس كبيرًا۔

और मुतकब्बिर जो मख़्लूक़ की नज़र में बड़ा होने की ग़लत कोशिश करता है, वह अपनी ही नज़र में बड़ा होता है, अल्लाह तआला मख़्लूक़ की नज़र में उसको ज़लील कर देते हैं। इस मरज़ के साथ उसका तक़्वा, तहारत व इबादत की कसरत, सब कुछ इस मरज़ को बढ़ाने का ज़रिया बनकर अल्लाह तआला से दूरी की वजह बनती है।

सबसे पहले तकब्बुर करने वाला जो सात लाख बरस तक तक़्दीस व तस्बीह का सरमाया अपने हाथ में रखता था और फ़रिश्तों का उस्ताद था, उसने एक ही बार 'अना' (मैं) का लफ़्ज़ निकाला था, फिर देख लो, जो हुआ। हदीस पाक में है कि, 'आदमी जन्नत के आमाल करता रहता है, यहां तक कि जन्नत और उसके दर्मियान एक बालिश्त की दूरी भर रह जाती है, आख़िर में ऐसा अमल करता है कि दोज़ख़ में डाल दिया जाता है। यह इस वजह से होता है कि उसके आमाल में इख़्लास नहीं होता।

हकीमुल उम्मत हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं

कि आदमी की ज़ाहिरी हालत पर मेरी नज़र नहीं होती, बल्कि मलकात पर होती है, इसीलिए मशाइख़ को देखा गया कि वे आमी मुख़्लिस पर ज़्यादा मुतवज्जह होते हैं और जिस मुत्तक़ी में किब्र महसूस करते हैं, उनसे दिली दूरी होती है।

जिस तरह इंसान राहत पर शुक्र और मुसीबत पर सब्र करके ख़ुदा से जुड़ सकता है, उसी तरह दोनों हालतों के हुक़ूक़ ज़ाया करके ख़ुदा से कट भी सकता है। ऐसे ही कभी इंसान को परहेज़गारी की तौफ़ीक़ होती है और कभी उस पर गुनाह मुसल्लत होता है, लेकिन क़ल्बी हालत के एतबार से कभी परहेज़गारी ख़ुदा से कटने और गुनाह ख़ुदा से जुड़ने की वजह बन जाता है। चुनांचे शेख़ इब्ने अताउल्लाह स्कनदरी दरवेशी की मशहूर किताब 'अल-हुक्म' में तह्रीर फ़रमाते हैं—

'जिस मासियत से हक़ीक़ी मौला के सामने ज़िल्लत और इफ़्तिक़ार पैदा हो, वह उस इबादत से बेहतर है जो नख़वत और तकब्बुर पैदा करे।'

शरह—इताअतों, इबादतों और अज़्कार का मक़्सूद यह है कि बन्दगी और अपने मौला के सामने ज़िल्लत व इफ़्तिक़ार पैदा हो और नफ़्स की सरकशी और किब्र टूटे और अगर बशरीयत की राह से गुनाह होजाने के बाद मोमिन के अन्दर ज़िल्लत व इन्किसारी और नदामत और अपने नफ़्स की तह्क़ीर और उस गुनाह से अपनी हलाकत जानना, ये सिफ़तें पैदा हों और इबादत करके नफ़्स के अन्दर नख़वत और मुसलमानों की तह्क़ीर और तान और अपने को आबिद जानना, ये सिफ़तें पैदा हों तो ऐसी ताअत के फल के तौर

पर उस मासियत का नतीजा बेहतर रहा, मगर इसका मतलब कोई बद-फ़हम यह न समझे कि इताअत को छोड़कर मासियत अख़्तियार करे। मासियत का बुरा होना और इताअत का बेहतर और सही होना बिल्कुल ज़ाहिर बात है।

यहां शेख़ को इस पर आगाह करना मंज़ूर है कि असल मक़्सूद बारगाहे आली तक रसाई है और उसको हासिल करने के लिए ज़िल्लत और इफ़्तिक़ार का हासिल करना और किब्र व नख़वत का दूर करना ज़रूरी है।

'गुनाह और नाफ़रमानी के वक़्त जिस क़दर तू अल्लाह के हिल्म का मुहताज है, बन्दगी और इताअत करने के वक़्त उससे ज़्यादा उसके हिल्म का मुहताज है।'

शरह—बन्दे का कमाल और मर्तबा और तमाम इबादतों का असली मक़्सूद यह है कि बन्दे की नज़र हर मामले में अल्लाह की तरफ़ ऐसी हो, जैसे भिखमंगा साइल होता है और बन्दे की हलाकत और पस्ती इसमें है कि अपने नफ़्स की तरफ़ मुतवज्जह हो और अपने अमल को पसन्द करे और अपने फ़ेल को अच्छा जाने और अपनी क़दर उसके दिल में हो। ऐसा बन्दा अल्लाह की बारगाह से मर्दूद होता है, इसके बाद समझो कि मोमिन की शान गुनाह हो जाने के बाद यह है कि इंकिसारी, आजिज़ी, नदामत, ज़िल्लत और अपने नफ़्स की नफ़रीन और अल्लाह के दरबार में तज़र्रुअ व ज़ारी व तौबा पैदा होती है। यही सिफ़त ऐन मक़्सूद और बन्दगी का कमाल है और इताअत और इबादत के बाद कभी-कभी ऐसा होता है कि नज़र उस अमल पर होती है और उसको अच्छा समझता है और अपने आप मुतीअ, आबिद और हक़ का अदा करने वाला और सवाब का

हक़दार जानता है, तो इस हालत में, उसकी नज़र अपने नफ़्स पर हुई तो उस पर अजब नहीं कि उस पर अल्लाह का ग़ज़ब हो और नारज़ामंदी की वजह बने। पस ऐसी इताअत पर बन्दा अल्लाह के हिल्म का गुनाह करने के वक़्त से ज़्यादा मुहताज है।

'ख़ुदा की क़सम! तेरा जाहिल का हमनशीं होना, जो अपने नफ़्स से नाराज़ है, तेरे लिए उस आलिम की सोहबत से जो अपने नफ़्स से रज़ामंद है, ज़्यादा बेहतर है, क्योंकि उस आलिम के लिए जो अपने नफ़्स से राज़ी है, उसका इल्म क्या मुफ़ीद है और उस जाहिल के लिए जो अपने नफ़्स से नाराज़ है, उसका जह्ल क्या नुक़्सान पहुंचाने वाला है।'

शरह : क्योंकि आलिम की सोहबत नफ़ा देने वाली और जाहिल की नुक़्सान पहुंचाने वाली सबके नज़्दीक मुसल्लम है, इसलिए क़सम खाकर शेख़ फ़रमाते हैं कि जो आदमी ज़ाहिरी इल्मों से जाहिल हो, लेकिन वह अपने नफ़्स से नाराज़ है और उसके क़ल्ब में यह यक़ीन बैठा हुआ है कि मेरा नफ़्स मज्मूआ है तमाम बुराइयों और ख़राबियों का और मैं सर से पैर तक ऐब और नुक़्सान हूं और अपनी ख़ूबी और कमाल का भूल कर भी वह्म व शुबहा उसको नहीं होता, तो यह आदमी कामिल है, इसलिए कि जो चीज़ जड़ है तमाम इताअतों की और कमालों की, वह उसको हासिल है, तो उसकी सोहबत तेरे लिए बेहतर है, गोया, हक़ीक़त में वह आदमी जाहिल ही नहीं और जो आदमी ज़ाहिरी उलूम का माहिर हो, लेकिन अपने हाल या अपने नफ़्स से राज़ी हो और उसको पसन्द करता हो, तो चाहे इल्मी दक़ाइक़ उसके अन्दर हो, लेकिन सोहबत नुक़्सान देने वाली है, इसलिए कि जो चीज़ हर ऐब व ग़फ़लत और मासियत की जड़ है,

वह उसके अन्दर मौजूद है और गो उसका ज़ाहिरी इल्म ज़ाहिर में उसको शरीअत का पाबन्द बनाए हुए है, लेकिन उसकी हालत ख़तरनाक है और उस पर किसी तरह का इत्मीनान नहीं है और ज़रूर यह मरज़ कभी न कभी अपना रंग लाए बग़ैर न रहेगा और जो उसकी सोहबत में रहेगा, तो चूंकि सोहबत का असर तस्लीम की हुई चीज़ों में से है, इसलिए उसके अन्दर भी यह मरज़ ज़रूर पैदा होगा कि अपनी इल्मी तहक़ीक़ात और अपने हाल को पसन्द करेगा और यह ठीक ग़फ़लत है और यह मरज़ बहुत दक़ीक़ है, इसलिए कि जिसके अन्दर होता है, उसको ख़ुद उसकी समझ नहीं होती, इसलिए कि इस मरज़ की हक़ीक़त ही अपने हाल को पसन्दीदगी की नज़र से देखना है।

शेख़ुल मशाइख़ हज़रत शेख़ुल हदीस साहब दा-म मज्दुहू अपने रिसाले 'स्ट्राइक' में लिखते हैं कि 'जिस माहौल (जो शरीअत और तरीक़त का ख़ज़ाना था) में इस सियहकार की परवरिश हुई है, उसमें शैतानी जरायम हैवानी जरायम से बहुत ज़्यादा शदीद समझे जाते थे, फिर ज्यों-ज्यों हदीस की रिवायतों पर नज़र हुई, ये चीज़ें दिल में जगह ही पकड़ती गईं। हैवानी जुर्मों में से हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का पाक इर्शाद—

"من قال لا اله الّا الله دخل الجنة وان زنى وان سرق على رغم انف ابى ذر"

और शैतानी जुर्मों में—

"لايدخل الجنّة من كان فى قلبه مثقال حبّة من كبر"

पहली क़िस्म में

"هلا سترته بردائك"

'हल्ला सतर्तुहु बिरिदाइ-क'[1]

और दूसरी हदीस में हज़रत अबूज़र रज़ि० के 'ताईर बिल उम्मे' में हुज़ूर सल्ल० का यह पाक इर्शाद

"انك امرءٌ فيك جاهليه"

'इन्न-क इमरउन फ़ी-क जाहिलीया'[2]

ने दूसरी क़िस्म की नफ़रत दिल में इतनी सख़्त कर दी कि उसकी कराहियत दिल के अन्दर बैठ गई। हज़रत आदम अलैहिस्सलाम का जुर्म पहली क़िस्म का था, ख़ुद अल्लाह तआला ने तौबा के कलिमे दिल में डालकर तौबा क़ुबूल कर ली और इबलीस का जुर्म दूसरी क़िस्म का था—

"فاخرج فيها انك رجيم وان عليك لعنتى الى يوم الدين"

फ़ख़रुज फ़ीहा इन्न-क रजीम व इन-न अलै-क लानती इला यौमिद्दीन०

का अबदी परवाना क़ियामत तक की लानत मिला।

ग़रज़ मुत्तक़ी हज़रात को दारैन (दोनों दुनिया) की तरक़्क़ी और

---

1. हज़रत माइज़ रज़ियल्लाहु अन्हु ने हज़रत हिज़ाल रज़ियल्लाहु अन्हु के मश्विरे से हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पास हाज़िर होकर चार बार ज़िना के बारे में इक़रार किया, तो हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने शरई क़ायदे के मुताबिक़ उनको रजम करने का हुक्म फ़रमाया, लेकिन हज़रत हिज़ाल से फ़रमाया कि अगर तू इसकी परदा पोशी कर लेता, तो तेरे लिए बेहतर था।

2. हज़रत अबूज़र रज़ि० फ़रमाते हैं, एकबार मैंने अपने ग़ुलाम को (गाली के तौर पर शर्म दिलाने के लिए) कह दिया था, 'ओ काली के बेटे!' इस पर हुज़ूर सल्ल० ने फ़रमाया कि ऐ अबूज़र! तुमने इसको मां की गाली दी है? तुम्हारे अन्दर तो यह जाहिलियत की एक ख़स्लत है।

इज़्ज़त व सआदत हासिल करने के लिए शैतानी तरीक़े को छोड़ देना चाहिए, यानी अपनी बड़ाई की फ़िक्र में दूसरों को गिराने की फ़िक्र छोड़ देनी चाहिए और जाह के हासिल करने की स्कीमों को अख़्तियार नहीं करना चाहिए, फिर देखें अल्लाह तआला अपने हबीब सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के इर्शाद 'मन तवाज़-अ लिल्लाहि, र-फ़-अहुल्लाहु' के मुताबिक़ हक़ीक़ी इज़्ज़त व बुलन्दी देते हैं।

हमारे अकाबिर (बड़ों) में क़ुतबुल आलम शेख़ुल अरब वल अजम हज़रत हाजी इम्दादुल्लाह साहब क़-द-द-स सिर्रहू जब अपने मुर्शिद हज़रत मियां जीव साहब क़द्द-स सिर्रहू के यहां से ख़िरक़ा-ए-ख़िलाफ़त से मुशर्रफ़ हुए तो रवानगी के वक़्त हज़रत मुर्शिद ने फ़रमाया कि क्या चाहते हो? तस्ख़ीर या कीमिया? हज़रत हाजी साहब यह जुम्ला सुनकर रो पड़े और अर्ज़ किया कि सिर्फ़ महबूबे हक़ीक़ी की ख़्वाहिश है, दुनिया की कोई चीज़ नहीं चाहिए। मुर्शिद ने सीने से लगाया, दुआएं दीं, फिर उनकी जो इज़्ज़त और बुलन्दी हुई, दीनदार तबक़े से छिपा हुआ नहीं।

हज़रत मियां जीव के दूसरे ख़लीफ़ा हज़रत हाफ़िज़ ज़ामिन साहब क़द्द-स सिर्रहू

'अरवाहे सलासा' में है कि जब कोई हाफ़िज़ मुहम्मद ज़ामिन साहब के पास आता तो फ़रमाते कि देख भाई! अगर तुझे कोई मसला पूछना है तो वह (मौलाना शेख़ मुहम्मद की तरफ़ इशारा करके) बैठे हैं मौलवी साहब! उनसे पूछ ले। अगर तुझे मुरीद होना है तो वह (हाजी साहब की तरफ़ इशारा करके) बैठे हैं हाजी साहब, उनसे मुरीद हो जा और अगर हुक़्क़ा पीना है तो यारों के पास बैठ जा।

इस कैफ़ियत के साथ ये तीनों क़ुतब एक ही जगह रहते थे, इसलिए उस वक़्त इम्दादिया ख़ानक़ाह मारफ़त की दुकान कहलाती थी।

शेख़ुल इस्लाम हज़रत मदनी रह०
हकीमुल उम्मत हज़रत थानवी रह०

हमें जिन बुज़ुर्गों की सोहबत नसीब हुई, उनमें हज़रत शेख़ुल इस्लाम मदनी रह० और हकीमुल उम्मत हज़रत थानवी रह० के आपस में ज़बरदस्त सियासी इख़्तिलाफ़ के बावजूद एक दूसरे को बढ़ाने और तवाज़ो के बारे में मामलात हज़रत मुर्शदी के रिसाले 'अल-एतदाल' के तक्मले में मुताला फ़रमाएं, फिर दोनों को अल्लाह ने एक दूसरे से बढ़कर इज़्ज़त दी।

हज़रत देहलवी रह० हज़रत रायपुरी के तवाज़ो के वाक़िए भी हमने आपने देखे और सुने और यह भी देखा कि अल्लाह पाक ने उस वक़्त सारी दुनिया में उनको शोहरत व इज़्ज़त दी। हज़रत मुर्शिदि पाक शेख़ुल हदीस साहब दा-म मज्दुहुम को जब मदीना पाक में हज़रत सहारनपुरी क़द्द-स सिर्रहू ने ख़िलाफ़त व इजाज़त से नवाज़ा, तो हज़रत शेख़ ने हज़रत रायपुरी रह० के पांव पकड़ लिए कि वह इस बात को किसी पर ज़ाहिर न करें। जामिया मज़ाहिर उलूम की निज़ामत उनके सुपुर्द करने की जब तज्वीज़ हुई, तो हज़रत ने तज्वीज़ रखने वालों से फ़रमाया कि अगर ऐसा हुआ तो आप हज़रात ढूंढते ही फिरेंगे कि ज़करिया नाम का कोई आदमी था। जब मज़ाहिरे उलूम की बराए नाम तंख़्वाह के मुक़ाबले में एक बहुत बड़ी तंख़्वाह पर दीनी काम ही के लिए बहुत ज़ोरदार पेशकश हुई तो जवाब में कार्ड पर एक ही जुम्ला लिख कर दिया कि— मुझको जीना ही नहीं

बन्दा-ए-एहसां होकर। (तफ़्सील के लिए देखिए आप बीती)

हज़रत शेख़ के यह माल व जाह छोड़ने के वाक़िए बहुत ज़्यादा हैं। पढ़ने वालों को मालूम भी हैं। यहां सिर्फ़ इस पहलू की तरफ़ मुतवज्जह करने के लिए नमूने के तौर पर लिखे हैं, फिर अल्लाह पाक ने क्या किया? सबके सामने है कि दुनिया ज़लील होकर हाथ जोड़े खड़ी है और आख़िरत के एज़ाज़ की बशारतें और निशान अभी से नुमायां हो रहे हैं।

इस तहरीर को यहां तक लिखकर एक दोस्त को दिखाया, तो उन्होंने फ़रमाया कि बहुत ख़ूब है, लेकिन हक़ीक़ी मुत्तक़ी और मुतवाज़े हज़रात ही इससे फ़ायदा उठाएंगे। जो मुत्तक़ी मुख़ातब हैं, वे फ़रमाएंगे कि सारी बातें ठीक हैं, सब लोगों को इस पर अमल करना चाहिए, मगर यह ख़्याल नहीं आवेगा कि हम ख़ुद ही मरीज़ हैं, क्योंकि हमारी तो इस्लाह हो चुकी और अब तो हम दूसरों की तर्बियत व इस्लाह करने पर मामूर व मशगूल हैं, उनकी ख़िदमत में अर्ज़ है कि हुब्बे जाह ऐसी चीज़ है कि जो सिद्दीक़ीन के दिलों से आख़िर में निकलती है। आप अपने को मुत्तक़ी समझते हुए भी बेफ़िक्र नहीं हो सकते। अमीरुल मोमिनीन हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ियल्लाहु अन्हु से पूछा करते थे कि मेरे अन्दर कोई निफ़ाक़ की बात तो नहीं, बल्कि मेरी गिनती मुनाफ़िक़ों में तो नहीं।

एक बार हज़रत उमर रज़ि० को देखा गया कि कमर पर मश्क लादे हुए मुसलमानों को पानी पिलाते फिरते थे। पूछा गया कि ऐ अमीरुल मोमिनीन! यह क्या है? फ़रमाया, कुछ लोग वफ़्द के तौर पर आए थे, उन्होंने मेरी तारीफ़ की, इससे नफ़्स में इंबिसात (ताज़गी) पैदा हुआ, इसका मैंने यह इलाज किया।

अमीरुल मोमिनीन हज़रत अली कर्रमल्लाहु वज्हहू ने कुरता पहना, वह अच्छा मालूम हुआ तो आपने उसकी आस्तीन बालिश्त भर काट दी, ताकि ऐब पड़ जाए और बदनुमा हो जाए।

हज़रत हकीमुल उम्मत फ़रमाते हैं कि ये हज़रात हैं, जिनसे ज़्यादा नफ़्स के धोखों से महफ़ूज़ कोई नहीं हो सकता। उनको इतना एहतमाम इस मरज़ का था। इस भरोसे पर नहीं रहते थे कि हमने नफ़्स को संवार लिया है और हमारा हाल यह है कि ज़रा ज़िक्र का शग़ल कर लिया और मुतमइन हो गए कि अब हम नफ़्स व शैतान के धोखे में नहीं आ सकते। ये लोग अश्रा-मुबश्शरा में से हैं, जिनकी निस्बत पूरा एतमाद है कि जन्नत में ज़रूर जाएंगे, मगर फिर भी यह हालत है कि तकब्बुर से कितना डरते थे।

कुत्बे रब्बानी शेख़ अब्दुल वह्हाब शारानी से हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तरफ़ से जो अह्द लिया गया (मुकाशफ़ा के तौर पर) उसको पढ़कर हमें अपने आपको समझना चाहिए, फिर अपने बाक़ायदा इलाज की फ़िक्र करना चाहिए।

अह्द : फ़रमाते हैं कि हमसे अह्द लिया गया कि हम अपने पास बैठने वाले हर मुसलमान से अपने आपको कम समझें, अगरचे वह मुसलमान बदहाली में कैसी ही इंतिहा को पहुंच गया हो, मगर हम अपने नफ़्स को इससे कमतर ही समझें। तमाम सलफ़ सालिहीन का मज़ाक़ यही था, रज़ियल्लाहु अन्हुम। जैसे वुहैब बिन मुनीब रह० ख़लीफ़ा उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ रह० और हसन बसरी रह० और सुफ़ियान सूरी रह०। फ़ुज़ैल बिन अयाज़ रह० तो यह फ़रमाया करते थे कि बन्दा उस वक़्त तक मुतवाज़े नहीं हो सकता, जब तक कि वह घर से निकल कर लौटने तक किसी को अपने से कम न समझे

और बन्दे की तरफ़ अब्दियत का कोई दर्जा उस वक़्त तक मंसूब नहीं हो सकता, जब तक कि वह अपनी तमाम इताअतों को दिखावा और तमाम हालात व कैफ़ियात को झूठे दावे न समझे और मैंने सैयदी अली ख़व्वास से सुना, वह फ़रमाते थे कि तकब्बुर और रऊनत वालों में जो कोई इस बात में शक करे कि उसका नफ़्स उसके बैठने वाले से कमतर है, उसको चाहिए कि अपनी तमाम उन लग़िज़शों और गुनाहों को जो इतनी उम्र में उससे हुई हैं, अपने नफ़्स के सामने पेश करे, फिर उनसे उन नुक़्सों का मुक़ाबला करे जो उसके पास बैठने वालों के अन्दर उसके इल्म में हैं, तो ग़ालिब यह है कि अपने गुनाहों को पास बैठने वाले के मालूम नक़ाइस से ज़्यादा जानेगा, क्योंकि अक्सर यही क़ायदा है कि इंसान अपने नक़ाइस को दूसरे के नक़ाइस से ज़्यादा जानता है। (बशर्तेकि सोचे) और जो आदमी गुनाहों में अपने हमनशीन से बढ़ा हुआ हो, वह मर्तबा में भी उनसे कमतर होगा। पस अब क्या हक़ है कि अपने आपको उससे अफ़ज़ल समझे और कुछ लोगों को ज़बकि दूसरों के गुनाहों का पूरी तरह इल्म नहीं होता तो यह ख्याल कर लिया करते हैं कि इसके भी गुनाह बहुत होंगे, (अगरचे मैं नहीं जानता) लेकिन किसी आदमी को यह जायज़ नहीं कि सिर्फ़ गुमान और अन्दाज़े से अपने पास बैठने वाले को ज़्यादा से ज़्यादा गुनाहों में अपने पर क़ियास कर ले और दिल ही दिल में यों कहे कि ऐसे शख़्स से यह बात नामुम्किन है कि अल्लाह ने उसको इन गुनाहों से बचा रखा होगा जो मुझसे हो गए हैं, इसलिए यह बदगुमानी है (और वह बदगुमानी जायज़ नहीं)

और अगर फ़र्ज़ भी कर लिया जाए कि किसी को दूसरे ऐब अपने ऐबों से ज़्यादा मालूम हैं, तब भी उसको लायक़ यही है कि दूसरों के ऐबों पर नज़र रखना छोड़ दे और अपने गुनाहों की वजह से ख़ुदा के

ख़ौफ़ में मश्गूल हो, अगरचे अपने गुनाह दूसरे के गुनाहों से गिनती में कम ही मालूम हों, क्योंकि हर मुकल्लफ़ को अपने गुनाहों की वजह से एहतियात के साथ ख़ुदा के ख़ौफ़ को दिल में जगह देना दूसरों के गुनाहों को गिनने की फ़िक्र में पड़ने से ज़्यादा बेहतर है, ख़ास तौर पर जबकि यह भी ख़बर नहीं कि अल्लाह तआला किस बात पर पकड़ करेंगे और किस गुनाह से आंखें चुरा लेंगे। मुम्किन है अल्लाह उसको माफ़ कर दे और तुम्हारी पकड़ हो जाए।

और इससे भी तरक़्क़ी करके हम यों कह सकते हैं कि फ़र्ज़ कर लो कि तुम्हारे अन्दर बहुत सी ख़ूबियां हैं और कोई भी ऐब नहीं और दूसरे आदमी में कोई भी ख़ूबी नहीं, बल्कि तमाम ऐब मौजूद हैं, जब भी तुम अपने को उससे अफ़ज़ल नहीं समझ सकते, क्योंकि शरई क़ायदा है— 'अल-आमालु बिल ख़वातीम'

الاعمال بالخواتيم۔

यानी 'आमाल का एतबार ख़ात्मे से होता है।' तुम्हें क्या मालूम कि तुम्हारा ख़ात्मा इन्हीं आमाल पर होगा या तक़्दीर में कुछ और ही लिखा है और क्या अजब है कि जो आदमी इस वक़्त सरापा गुनाह ही गुनाह है, उसका ख़ात्मा अच्छा हो जाए और तुमसे मर्तबे में बढ़ जाए और यह ख़्याल कर लेना चाहिए कि जिस ख़ुदा ने दूसरों को नेक आमाल की तौफ़ीक़ नहीं दी, वह इस पर भी क़ादिर है कि नेक आमाल की तौफ़ीक़ तुमसे सलब करके उसको दे दे। बड़ाई और अज़्मत अल्लाह पाक की ज़ात के लिए ज़ेबा है, बन्दे को आजिज़ी, और ख़ाकसारी में निजात है। तवाज़ो असल इबादत है, क्योंकि इबादत ग़ायत ज़िल्लत को कहते हैं। पस ऐ अज़ीज़! नफ़्स को हर पास बैठने वाले मुसलमान से कमतर मुशाहदा कर। इसके बाद अल्लाह तआला शानुहू तुझको मेरे हमअसरों पर बुलन्दी अता

फ़रमाएंगे, क्योंकि हदीस सहीह में है—

من تواضع لِلّٰه رفعه الله۔

'मन तवाज़-अ़ लिल्लाहि, रफ़-अहुल्लाहु'

'जो अल्लाह के लिए तवाज़ो अख़्तियार करेगा, अल्लाह उसको बुलन्दी अता फ़रमाएंगे।'

अल्लाह तआला ने हमको इस वास्ते अपना बन्दा नहीं बनाया कि हम अपने को किसी भी मख़्लूक़ से अफ़ज़ल समझा करें, बल्कि अल्लाह तआला ने इससे हमको बहुत सख़्ती से मना फ़रमाया है और अपने रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ज़ुबानी इर्शाद फ़रमाया है—

لايدخل الجنة من كان في قلبه مثقال ذرة من كبر يعنى على اخيه المسلم۔

इश्कालात और उनका जवाब

दीनदार तबक़े पर जो इश्कालात आम तौर से किए जाते हैं और कहा जाता है कि ये बातें लोगों के लिए हिदायत के रास्ते में रुकावट बनती हैं, वे इस तबक़े की अख़्लाक़ी पस्ती और मामलों की ख़राबी से मुताल्लिक़ होती हैं।

इस बारे में ज़िक्र किए गए तबक़े और इश्काल पेश करने वाले दोनों फ़रीक़ों की ख़िदमत में अलग-अलग अर्ज़ करना है। दीनदार लोगों के सामने तो ज़्यादा लम्बी बात की ज़रूरत नहीं कि उनमें से ज़्यादातर लोग इल्म वाले हैं, वे ख़ुद इस मौज़ू पर बहुत अच्छी तक़रीरें कर सकते हैं और किताबें लिख सकते हैं। उनसे सिर्फ़ इतना ही अर्ज़ करना है कि इस रिसाले में अकाबिरीन (बड़ों) के मलफ़ूज़ात (लिखी

बातें) अपने ज़ात की ख़ातिर पढ़कर उम्मुल अमराज़ की फ़िक्र कर लें। फिर न तो आपको किसी से शिकायत होगी, न कोई आप पर एतराज़ करेगा और जो इस दीनदार तबक़े में इल्म वाले नहीं हैं, वे यह ख़्याल रखें कि कामिल दीन के तक़ाज़ों के पांच शोबे हैं—

1. अक़ीदे, 2. इबादतें, 3. मुआशरत, 4. मईशत (खाने-पीने-कमाने से मुताल्लिक़) और 5. अख़्लाक़।

इनकी अहमियत में ज़िक्र की गई तर्बीब के बावजूद आपस में जोड़ है, जैसे कोई अक़ीदों और इबादतों में पूरा हो, लेकिन मामलों में गड़बड़ होने की वजह से हराम खाने और हराम पहनने से उसकी ख़ुशूअ-ख़ुज़ूअ के साथ एहतिमाम से पढ़ी हुई नमाज़ें क़ुबूल नहीं होतीं, किसी के तीन पैसे भी अपने ज़िम्मे रह गए हों, तो उसके बदले पांच सौ फ़र्ज़ क़ुबूल नमाज़ें देना पड़ेंगी। इस तरह थोड़े से पैसों के बदले सारी क़ीमती पूंजी चली जाएगी। इसी तरह अख़्लाक़ी ख़राबी में, जैसे हसद, तो इसकी वजह से बड़ी-बड़ी नेकियां बर्बाद हो जाती हैं, क्योंकि हदीस पाक में है कि हसद नेकियों को इस तरह खा जाता है कि जैसे आग सूखी लकड़ियों को। ग़ीबत करने से अपनी मेहनत की हुई नेकियां दूसरे के आमालनामे में मुंतक़िल हो जाती हैं और उनके ख़त्म हो जाने पर उनके गुनाह ग़ीबत करने वाले के आमालनामे में लिख दिए जाते हैं। यही हाल दूसरी हक़तलफ़ियों का है और अक़ीदों की ख़राबी के साथ तो किसी भले अमल का एतबार ही नहीं। ये लोग भी अगर उम्मुल अमराज़ की फ़िक्र कर लें, तो इनशाअल्लाह मुकम्मल दीन पर अमल की तौफ़ीक़ और तवज्जोह हो जाएगी।

अब इश्काल करने वालों की ख़िदमत में अर्ज़ है कि मौत सर पर खड़ी है। पहले अपने ऊपर होने वाले मुतालबों के जवाब की फ़िक्र करें, फिर अगर तफ़्सील मत्लूब हो तो हज़रत अक़्दस शेख़ुल हदीस साहब के रिसले 'अल-एतदाल' को पढ़ें और जिनको इसकी तौफ़ीक़ न हो तो

वे इसी किताब में नीचे लिखी गई मुख़्तसर बातों को ग़ौर से पढ़ें—

1. यह एक तस्लीम की हुई हक़ीक़त है कि इश्काल, चाहे किसी भी जमाअत या तबक़े के बारे में हों, उनमें अक्सर की बुनियाद ग़लतफ़हमी, सुनी-सुनाई बातों पर यक़ीन कर लेना और बदज़नी वग़ैरह होती है, यहां इस क़िस्म का ज़िक्र मक़्सूद नहीं बल्कि हक़ीक़तों और वाक़िओं को सामने रखकर कुछ अर्ज़ करना है।

2. हज़रत शेख़ुल हदीस दामत बरकातुहुम 'अल-एतदाल' में एक जगह फ़रमाते हैं कि क्या हर आदमी, जो इल्म वालों के लिबास में हो किसी अरबी मदरसे के तालिब इल्मों के रजिस्टर में नाम लिखा चुका हो, या तक़रीर दिलचस्प करता हो या तहरीर अच्छी लिखता हो, वह आलिम है और उलेमा की जमाअत का फ़र्द है? इसलिए हर आदमी की बात को लेकर और सुनकर उलेमा की तरफ़ मंसूब कर देना, ज़ुल्म और अपनी जिहालत नहीं तो और क्या है? क्या खरा-खोटा, असली-जाली, वाक़ई-बनावटी दुनिया की हर चीज़ में नहीं है। देखो दुनिया की क़ीमती से क़ीमती चीज़ सोना-चांदी और जवाहरात हैं और ज़रूरी से ज़रूरी और हर शख़्स का मुहताज इलैहि पेशा हकीम व डाक्टर का पेशा है, फिर क्या दोनों क़िस्में ऐसी नहीं हैं जिनमें खरे से खोटा ज़्यादा और असली से नक़ली ज़्यादा न मिलता हो या वाक़ई बनावटी बढ़े हुए न हों, तो फिर क्या हकीमों और डाक्टरों को इस वजह से गालियां दी जाती हैं कि उनके लिबास में बनावटी और ख़तरा-ए-जान डाक्टर ज़्यादा हैं या हर सोने-चांदी और जवाहरात को इस तरह से फेंक दिया जाता है कि वे नक़ली और बनावटी ज़्यादा होते हैं? नहीं, नहीं, बल्कि इन चीज़ों में यहां तक इफ़रात की जाती है जहां मशहूर और जानकार डाक्टर नहीं मिलता, तो वहां जान-बूझकर ऐसे ही डाक्टरों की तरफ़ रुजू किया जाता है,

यह क्यों? इसलिए कि ज़रूरत सख़्त है और माहिर डाक्टर के पास फ़ौरन पहुंचना मुश्किल है। यह फ़र्क़ इस वास्ते है कि इलाज को ज़रूरत की चीज़ समझा जाता है। इसी तरह अगर आपको वाक़ई दीनी ज़रूरत है, जैसे कोई मसअला पूछना है या बैअत होना है, तो छान-बीन करके तलाश करें, अभी तक दुनिया ख़ाली नहीं। आपकी मुनासबत और अक़ीदत का कोई न कोई आदमी मिल ही जाएगा।

3. और अगर आपको कोई मामला नहीं करना, सिर्फ़ दूसरों की दीनी ख़ैरख़्वाही और दीनदार तबक़े की बदहाली पर दर्द से तबसरा फ़रमाना है तो यक़ीन कर लें कि यह शैतान का धोखा है, अपने से बे-फ़िक्री की अलामत है। आप पर उम्मुल अमराज़ का हमला है। अपने आपको पाक तो कोई नहीं कहता, बल्कि झूठी ज़ुबान से सब कहते हैं कि हम तो सबसे बुरे हैं, गुनाहगार हैं, मगर इन बुज़ुर्ग हज़रात पर फ़्लां इश्काल हैरान व परेशान किए हुए हैं। अगर सच्चाई से कोई अपने को भी गुनाहगार समझे तो सारे इश्काल और हैरानी ख़त्म हो जाए—

हुई जब तलक अपनी न ख़बर
रहे देखते औरों के ऐब व हुनर
पड़ी अपने गुनाहों पर जबकि नज़र
तो निगाह में कोई बुरा न रहा।

हदीस पाक में है, हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत अबूज़र ग़िफ़ारी रज़ियल्लाहु अन्हु को वसीयत फ़रमाई कि तुम्हारा अपने ऐबों पर नज़र रखना तुम्हें दूसरों के ऐबों पर नज़र रखने से रोक देगा।

4. कुछ लोग वाक़ई इख़्लास से सूरतेहाल पर हैरान होंगे। उनके इत्मीनान के लिए कुछ वज़ाहत भी की जाती है।

हज़रत शेख़ दामत बरकातुहुम 'अल-एतदाल' पृ. 77 में फ़रमाते हैं कि ज़माने के बदलने का असर दुनिया की हर चीज़ पर है, तो अह्ले इल्म उससे बाहर कैसे जा सकते हैं। ज़माना जितना भी नुबूवत के ज़माने से दूर होता जाएगा, उतने ही फ़ित्ने और शुरूर (ख़राबियां और बुराइयां) उसमें बढ़ते जाएंगे, लेकिन हम लोग अपने अन्दर हर क़िस्म के ज़ोफ़ व इन्हितात को तस्लीम करते हैं, मगर अह्ले इल्म के लिए वही पहला मंज़र चाहते हैं और उसी मेयार पर ये जांचना चाहते हैं। जब जिस्मानी क़ूवतों का ज़िक्र आ जाए, हर आदमी कहता है, अजी! वे क़ूवतें अब कहां हैं? लेकिन रूहानी क़ूवतों और इल्मी मुजाहदों का ज़िक्र आ जाए, तो हर आदमी, जुनैद, शिबली, बुख़ारी, ग़ज़ाली की खूबियों की तलब करने वाला और ख़्वाहिश रखने वाला बन जाता है, हालांकि दीनी गिरावट की पेशीनगोई ख़ुद नबी अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से नक़ल की गई है। हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इर्शाद है—

'तुम पर कोई साल और कोई दिन ऐसा नहीं आएगा जिससे बाद वाला साल और दिन उससे ज़्यादा बुरा न हो, यहां तक कि तुम अपने रब से जा मिलो।'

मनावी कहते हैं कि यह दीन के एतबार से और अक्सरीयत के लिहाज़ से है, यानी कुछ लोगों का इससे ख़ारिज होना इश्काल की वजह नहीं।

अलक़मी हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि० से रिवायत करते हैं कि कोई दिन ऐसा न आएगा जो इल्म के एतबार से बीते दिनों से कम न हो और जब उलेमा न रहेंगे और कोई नेक बातों का हुक्म करने वाला और बुरी बातों से रोकने वाला न रहेगा, तो उस वक़्त सब ही हलाक हो जाएंगे।

एक हदीस में इर्शादे नबवी है कि नेक लोग एक-एक करके उठ जाएंगे और लोग ऐसे रह जाएंगे जैसे कि ख़राब जौ और ख़राब खजूर (कीड़ा लगी हुई) कि अल्लाह तआला शानुहू उनकी ज़रा भी परवा न करेंगे, इसलिए दीन और दीनी मामलों की गिरावट, कमी, कमज़ोरी, सभी कुछ होकर रहेगा। ऐसी हालत में सलाह व फ़लाह की कोशिश करते हुए जो कुछ मौजूद है, उसको ग़नीमत समझना ज़रूरी है कि इसके बाद उससे कमी ही की तरफ़ रुजू करना पड़ेगा।

—अल-एतदाल

इस बात से भी किसी को इंकार नहीं हो सकता कि इस वक़्त दीन के वजूद और क़ियाम का इन्हिसार, मदरसों, मस्जिदों, ख़ानक़ाहों की आबादी, तब्लीग़ी इदारों और जमाअतों के वजूद पर है और हर शोबे में और ज़्यादा तरक़्क़ी व फैलाव की ज़रूरत है और यह काम सिर्फ़ दो चार मेयारी शख़्सियतों की ज़ात से पूरा नहीं हो सकता। इसके लिए इस लाइन के हज़ारों दीन की ख़िदमत करने वाले और उनके हज़ारों मदद करने वालों की ज़रूरत है। एक तबक़े ने अपने को इसके लिए वक़्फ़ कर रखा है। ज़ाहिर है कि ये सब मेयारी नहीं हो सकते। अगर ये सब लोग अपने नाक़िस होने की बुनियाद पर दीनी ख़िदमतें छोड़ दें, तो ज़िक्र किए गए तमाम सिलसिले बन्द हो जाएं जिसका नतीजा ज़ाहिर है। इसलिए ज़रूरी हुआ कि इन लोगों की कोताहियों पर नज़र करने के बजाए उनकी इज़्ज़त और हौसला अफ़ज़ाई करनी चाहिए और अल्लाह से उम्मीद करना चाहिए कि वह करीम उनकी ख़ूबियों और ख़िदमतों को क़ुबूल करके इनकी कमज़ोरियों से दरगुज़र फ़रमाएंगे।

हज़रत शेख़ुल हदीस दा-म मज्दुहुम फ़रमाते हैं

आदमी को अपनी फ़िक्र में हर वक़्त मश्ग़ूल रहना चाहिए। दूसरों की तंक़ीद या ऐब जूई की फ़िक्र में न पड़ना चाहिए, ख़ास तौर से अकाबिर के जो मोतमद मुक़्तदा और उलेमा हों, उनकी बातों और कामों के पीछे न पड़ना चाहिए। शरअ के ख़िलाफ़ बातों में पैरवी किसी की नहीं, लेकिन उनके क़ौल की ज़िम्मेदारी तुम पर नहीं। मुझसे कुछ सालों से एक बेकार का सवाल ज़्यादा से ज़्यादा ख़तों में किया जा रहा है कि फ़्लां हज़रत ने फ़्लां को क्या बैअत की इजाज़त दे दी? मैं तो इन बेकार की बातों का जवाब अक्सर यह दिया करता हूं कि जब क़ब्र में मुन्किर-नकीर तुमसे यह सवाल करेंगे तो तुम बे-तकल्लुफ़ कह देना कि मुझे ख़बर नहीं। आख़िरत का मामला बड़ा सख़्त है और घमंड, अपने को समझना और दूसरों को छोटा समझना, उनमें बुराई निकालना, ये निहायत ख़तरनाक बातें हैं। (आप बीती, पृ. 5)

राहे हक़ के सालिकों के बारे में हज़रत शाह सैयद अहमद शहीद रह० की कही बातें जो कि हज़रत मौलाना इस्माईल शहीद रहमतुल्लाहि अलैहि ने सिराते मुस्तक़ीम में मुरत्तब फ़रमाई हैं

'इसमें है कि 'बुख़्ल, हसद, तकब्बुर, ग़ीबत, कीना, रिया, तमा जैसी बुरी आदतों के साथ राहे हक़ के सालिकों के नफ़्सों का आलूदा हो जाना, उन पर रहमानी फ़ैज़ के नाज़िल होने और ख़ुदाई इनायतों के वारिद होने से महरूमी की बड़ी जबरदस्त वजह है। सलफ़ सालिहीन इन बुराइयों का दूर करना निहायत ज़रूरी समझते थे और उनको सिर्फ़ अल्लाह की रिज़ा चाहने के लिए अपने दिल से दूर करते थे, यहां तक कि उनका कुछ असर बाक़ी न रहता और उनके दिल साफ़ हो जाते, इसलिए बेहद मेहरबानियों की वजह हुआ करते थे और

इसी तस्फ़िया की वजह से 'जो सिर्फ़ अल्लाह को ख़ुश करने के वास्ते अमल में लाते, मक़्बूल हो जाते और जो आदमी सुलूक के मर्तबों को तै करने के बावजूद मेहरबानियों की वजह न बने, तो बेशक इन तमाम गन्दगियों का वजूद अल्लाह की इनायतों के आने में रुकावट है।'

पहले हज़रत गंगोही रहमतुल्लाहि अलैहि का इर्शाद गुज़र चुका कि तमाम बुराइयों का ख़ुलासा तकब्बुर है। अगर यह दूर हो जाए, तो बाक़ी ख़ुद दूर हो जाते हैं। आगे हज़रत शाह साहब फ़रमाते हैं—

'पस इस ज़माने के लोगों के मुनासिबे हाल यह है कि मारफ़ते इलाही की तरफ़ पहुंचने के वास्ते, जिस तरह शग़ल और मुराक़बे करते हैं, उसी तरह इन मामलों के वास्ते मुराक़बा अख़्तियार करें और इसके बावजूद क़ुबूलियत के दरबार में पहुंचने को महाल समझें, अगरचे मारफ़त के मुक़ाम पर पहुंच जाते हैं, लेकिन इनायत और क़ुबूल के रास्ते से नहीं, बल्कि एक और दरवाज़े से पहुंचते हैं जहां क़ुबूल और ना क़ुबूल की कोई पूछ नहीं है'।[1]

---

1. चुनांचे अगर किसी को ज़िक्र की कसरत से याददाश्त का मलका और दूसरे ऊंचे दर्जे हसिल हो जाएं, मगर तवाज़ोअ़ हासिल न हो तो समझना चाहिए कि उसको अभी ताल्लुक़ बिल्लाह या एतबार करने लायक़ निस्बत, क़ुबूल होने के मानी में हासिल नहीं हुआ, अलबत्ता यह मुम्किन है, बल्कि आजकल ऐसा ही होता है कि अख़्लाक़ के दुरुस्त होने से पहले अशग़ाल वग़ैरह से वसूल या यकगूना निस्बत हासिल हो जाती है, फिर अख़्लाक़ की दुरुस्ती आसान हो जाती है। तकब्बुर का ख़त्म होना तक़्वा व तवाज़ोअ़ का पैदा होना शुरू हो जाता है। अगर नहीं होता तो ये क़ुबूलियत के अह्वाल की अलामत न होंगे, क्योंकि जब अल्लाह तआला बन्दे को अपनी रहमत से याद फ़रमाते हैं तो उसकी बुराइयां दूर फ़रमा देते हैं। ज़ाहिर है कि जब बन्दे को मुहब्बत के साथ अपने मालिक की हुज़ूरी हासिल होगी तो वह सरापा तवाज़ोअ़ बन जाएगा और यही हक़ीक़ी बुज़ुर्गी है और जो आदमी सिर्फ़ ऊंचे अह्वाल पर अपनी बुज़ुर्गी ख़ुद साबित करे वह उसी क़दर ज़लील होगा।

ज़िक्र किए गए रज़ाइल से ख़ाली होने और नेक आदतों के साथ मुज़य्यन होने के सिवा शैतान और नफ़्स की शरारतों से बचकर इस मुक़ाम में पहुंचना मुम्किन नहीं और इन बुरी आदतों का छोड़ देना तो उस चोबदार और रक़ीब की तरह है जो अपने आप इंसान को मक़ामे मक़्सूद (क़ुबूलियत) पर पहुंचा देता है और कभी-कभी उस बारगाह से एक ख़ास इज्तिबा हासिल हो जाता है कि आमाल की ज़्यादती और तक्लीफ़ों और मशक़्क़तों के उठाए बग़ैर ही आदमी को क़ुबूलियत से कामियाब कर देता है।

आगे चलकर इस उम्मुल अमराज़ (तकब्बुर) के इलाज के सिलसिले में फ़रमाते हैं कि अगर किसी शख़्स की निस्बत से तकब्बुर ज़ाहिर हो गया तो हद से ज़्यादा उसके सामने ज़िल्लत अख़्तियार करे, अगरचे इस क़दर तज़ल्लुल और ताज़ीम की वजह से लोगों की मज्लिसों में उसकी हरकतों की नक़लें हों और अपने हम जिंसों में उस पर हंसी उड़े, अगर अल्लाह तआला की रिज़ा की तलब रखता है और अपने आपको उसकी तलब रखने वालों में दाख़िल करना चाहता है, तो किसी बात की परवाह न करेगा। तुम देखते नहीं कि मुअज़्ज़ज़ अमीरज़ादा होता है। वह हीजड़ों की मुहब्बत का शिकार होकर वे सब बातें जिनको कोई भला आदमी गवारा नहीं करता, दिल व जान से क़ुबूल करके उन्हीं वज़ा और तौर-तरीक़ों के साथ बाज़ारों और गली-कूचों के सामने फिरा करता है, अगर सच्चा ख़ुदा का तालिब है तो उन मामलों से हरगिज़ इंकार नहीं करेगा जो अक़्ल और शरीअत के बिल्कुल मुवाफ़िक़ हैं, गो अल्लाह की मर्ज़ी से बेख़बर लोगों की नाक़िस अक़्लों के मुख़ालिफ़ हों और तज़ल्लुल से भी यह बनावटी तज़ल्लुल यानी सर झुका लेना और ज़मीन चूम लेना मत्लूब नहीं, बल्कि हर मुक़ाम में और हर जगह में उसकी हक़ीक़त जुदा और

अलग है, जैसे जो आदमी मशाइख़ के लिबास में हो और मशाइख़ में से किसी शख़्स के मुक़ाबले में तकब्बुर किया हो, तो उसको चाहिए कि उसके साथ ऐसा मामला करे कि लोगों को इस बात का यक़ीन हो जाए कि इस शख़्स ने इस शख़्स से तरीक़त का फ़ायदा हासिल किया है और अपने नुक़्सान को उसकी सोहबत में पूरा किया है।

अल्लाह से मिलने का सबसे क़रीब रास्ता

मलफ़ूज़ हज़रत सैयद अहमद कबीर रफ़ाई क़द्द-स सिर्रहू

फ़रमाया—दोस्तो! मैंने अपनी जान खपा दी और कोई रास्ता ऐसा न छोड़ा जिसको तै न किया हो और सच्ची नीयत और मुजाहदे की बरकत से उसका सही रास्ता होना मालूम न कर लिया हो, मगर सुन्नते मुहम्मदी पर अमल करने और ज़िल्लत व इंकिसारी वालों के अख़्लाक़ पर चलने और सरापा हैरत व इस्तेजाब बनने से ज़्यादा किसी रास्ते को बहुत क़रीब और ज़्यादा रोशन, अल्लाह तआला के नज़दीक ज़्यादा महबूब नहीं पाता। सिद्दीक़े अक्बर सय्यिदना अबूबक्र रज़ि० फ़रमाया करते थे कि अल्लाह का शुक्र है कि उसे अपने तक पहुंचने का ज़रिया आजिज़ी के सिवा कुछ नहीं बनाया, क्योंकि आजिज़ी तो हर शख़्स आसानी से हासिल कर सकता है कि इंसान तो सर से पैर तक आजिज़ ही है। अगर और कोई तरीक़ा अल्लाह तक पहुंचने का इसके सिवा होता तो मुश्किल पड़ जाती। अल्लाह के पाने से अपनी आजिज़ी और कमज़ोरी को समझ लेना ही अल्लाह को पा लेना है।' (अल-बयान) वल्लाहुल मूफ़िक़ व हुवल मुस्तआन०

"उम्मुल अमराज़" यानी तमाम रुहानी और अख़्लाकी बीमारियों की जड़ और यह है "तकब्बुर" यानी अपने आप को बड़ा समझना कि मैं भी कुछ हूँ, इसका लाज़मी नतीजा यह है कि आदमी दूसरों को हकीर, ज़लील और कमतर समझता है, जिसकी वजह से वह अल्लाह तआला की निगाह से भी गिर जाता है और अपने माहौल और सोसाइटी में भी तरह-तरह की ख़राबियां पैदा हो जाती हैं।

इस किताब में कुरआन मजीद और हदीस शरीफ़ के हवाले से तकब्बुर की बुराई और उसके दीनी और दुनियावी नुक्सानात भी बयान किये गये है, उसकी अलामात और पहचान भी बताई गई है और आख़िर में इस बीमारी का रुहानी इलाज भी तजवीज़ किया गया है।

किताब में जगह-जगह बहुत से उलेमा व मशाइख़ और बुज़ुर्गों की आजिज़ी, इन्किसारी और तवाज़ो के सबक़ आमूज़ वाक़िआत भी दर्ज किये गये हैं। आदमी अगर जी लगा कर अपनी इस्लाह की नीयत से इस किताब को पढ़ेगा तो उम्मीद है "तकब्बुर" की बीमारी से निजात मिल जायेगी।